स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–20, अंक–6, ज्येष्ठ–आषाढ़ 2069, जून 2012

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी
दिल्ली–110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से
ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट
बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन
शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा–4

सरकार उपलब्ध विकल्पों का भी सही मायनों में उपयोग नहीं कर रही। आज जरूरत इस बात की है कि सरकार रूपये की गिरावट को थामने के लिए सोने चांदी के आयात पर मात्रात्मक नियंत्रण लगाये . . .

कवर पेज

अ नु क्र म

आवरण लेख
बदहाल अर्थव्यवस्था : बदहवास सरकार
– डॉ. अश्विनी महाजन /4

आन्दोलन
राष्ट्रीय परिषद् बैठक आगरा
(पारित प्रस्ताव 1, 2, 3) /6

सामयिकी
काले धन पर सफेद पर्दा
– डॉ. वेद प्रताप वैदिक /10

अर्थव्यवस्था
विश्व अर्थव्यवस्था को सुदिशा दीजिये
– डॉ. भरतझुनझुनवाला /12

मंदी बनाम रुपया
मंदी का साया और रुपए के साथ साजिश!
– निरंकार सिंह /15

अर्थ–तंत्र
आर्थिक अक्षमता का एक और साक्ष्य
– अवधेश कुमार /19

चुनौतियां : वैश्विक चुनौतियों का अर्थशास्त्र
– जयंतीलाल भंडारी /22

जैविक खेती
स्वदेशी जैविक (प्राकृतिक) खेती वर्तमान की आवश्यकता
– हुकमचन्द पाटीदार /24

जल संधि
एक और कूटनीतिक विफलता
– ब्रह्म चेलानी /25

संसद
साठ साल का सफर
– ए. सूर्यप्रकाश /27

समस्या
घुसपैठियों की शरणस्थली
– बलवीर पुंज /29

बेरोजगारी
भारत में बेरोजगारी कम होने के संकेत नहीं
– गिरीश अवस्थी /31

इतिहास और अब
राष्ट्रीय वृक्ष बरगद के अस्तित्व पर खतरा
– उमेश प्रसाद सिंह /33

पाठकनामा/2, रपट/35

पाठकनामा

भूखे मरते लोग दूसरी तरफ खुले आसमान के नीचे सड़ता अनाज

भारत का किसान दिन–रात एक करके अनाज पैदा करता है लेकिन हमारी राज्य सरकारें और केन्द्र सरकार की एजेंसियां अपनी लापरवाही के कारण लाखों टन गेहूं हर वर्ष बर्बाद कर रही है। खुले आसमान के नीचे काफी गेहूं रखने के कारण यह सब हो रहा है। यह सिलसिला आज से नहीं पिछ्ले एक दशक से लगातार चलता जा रहा है। भारत में आज अनाज को रखने के लिए गोदामों और भंडारण की घोर समस्या है। लेकिन हर बार सर्वोच्च न्यायालय की फटकार के बाद भी इस मुद्दे को केन्द्र और राज्य सरकारें हल नहीं कर पाई है। न्यायालय ने तो सरकार को यहां तक कह डाला देश में एक तरफ लोग गरीबी के कारण भूखे मर रहे है तो सरकार अनाज को सड़ने की जगह गरीबों को मुफ्त प्रदान करे। परंतु सरकार के कानों में तो शायद जूं तक नहीं रेंगती। क्यों नहीं राज्य सरकार और केन्द्र सरकार मिलकर भंडारण की पर्याप्त सुविधा करती। क्यों नहीं बर्बाद हो रहे अनाज को राज्य सरकारें और केन्द्र सरकार गरीबी को क्यों नहीं देती?

– मनु रावत, स्कूल ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली

बाजारवादी युग में बिक रहा है ग़म

अभी हाल ही में एक निजी चैनल में 'सत्यमेव जयते' कार्यक्रम प्रस्तुत हो रहा है। कार्यक्रम देश की समस्याओं और करोड़ों दिलों को छू लेने वाला है। हर एपिसोड में देश की दर्दभरी कहानियां परोसी जाती है। लंबे समय तक समाज–सेवक जो काम नहीं कर पाए वह तकनीकी के घोड़े पर बैठकर एक प्रसिद्ध अभिनेता ने कर दिखाया।

हम सब जानते हैं कि गरीब के निवाले पर पिछले करीब आधी शताब्दी तक हमारे देश में सरकारें अपना पेट भरती रही हैं। अब तो सरकार ने गरीबी का नारा बनाना ही बंद कर दिया है। इसलिए गरीबों और आम आदमी के निवाले पर डाका डालने का नया फार्मूला बड़े–बड़े चैनलों ने उठा लिया है। अब भावनात्मक शोषण उनका बड़ा कारगर हथियार बन गया है। किसी के रोने और समस्या ग्रस्त लोगों की तरफ कैमरा करके दर्शकों की संख्या बढ़ाई जाती है।

फिर भी ऐसा नहीं है कि इस भावनात्मक शोषण के जरिए प्रसिद्ध अभिनेता और निजी चैनल पैसा पीट रहा है। इसमें सभी को लाभ हो रहा है। आखिर में सवाल यह उठता है कि अगर किसी एक ऐसे कार्यक्रम में जिसमें सबको फायदा होता दिख रहा है तो घाटे में कौन है? दिमाग पर जोर डालिए और सोचिए कि भावनात्मक रूप से आखिर किसे ब्लैकमेल करके यह सारा आर्थिक मॉडल तैयार किया गया है।

जहां तक मैं समझता हूँ यह भी एक बाजारवादी युग का हिस्सा है। जहां कल तक हंसी बिकती थी आज गम का बाजार चरम सीमा पर है।

– अमरेश कुमार, आया नगर, दिल्ली

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022
दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com
अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।
वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए
आजीवन सदस्यता शुल्कः 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

लोग संप्रग से नाराज हैं, लेकिन हमसे भी खुश नहीं हैं। उत्तर प्रदेश चुनाव के नतीजे और झारखंड व कर्नाटक जैसे फैसलों से पार्टी की छवि खराब हुई है। हमें आत्ममंथन की जरूरत है।

– लालकृष्ण आडवाणी

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह पर पहले मैं पूरा विश्वास करता था, परंतु अब उन पर मैं जरा भी विश्वास नहीं करता हूँ। उनके रवैये से मेरा पूरा विश्वास उठ गया है।

– अन्ना हजारे

पीएम पर आरोप हमने नहीं, बल्कि सीएजी की रिपोर्ट में लगाए गए हैं। सीएजी के मुताबिक कोल ब्लॉक की नीलामी न करने से सरकार को एक लाख 80 हजार करोड़ रुपये की चपत लगी।

– अरविन्द केजरीवाल

पेट्रोल की कीमतों में की गई आंशिक कटौती स्वीकार्य नहीं है। सरकार को चाहिए कि वह तेल की बढ़ी कीमतों में पूर्ण कटौती करे। इसके बिना आम जनता को राहत नहीं मिलने वाली।

– निर्मला सीतारमण

अमरीका और यूरोप हमारे बाजार पर कब्जा जमाकर 120 करोड़ जनता को लूटने के प्रयास में लगे हुए हैं।

– आर.के. सिन्हा
अध्यक्ष आदित्यपुर स्माल स्केल इंडस्ट्रीज

संपादकीय

कमजोर रुपया

जरूरत सही कदम उठाने की

लगातार रसातल में जाते रूपये के मद्देनज़र आज पूरे राष्ट्र में चिंता व्याप्त है। लगातार गिरता रुपया आमजन का जीना दूभर कर रहा है। केवल तीन महीने पहले जो 48.70 रूपये प्रति डॉलर से अब रूपया घटता हुआ 56.00 प्रति डॉलर तक पहुंच चुका है। यह अपने में एक रिकार्ड तो है ही, आयातित वस्तुएं विशेष रुप से कच्चा तेल औद्योगिक कच्चा माल तथा धातु महंगी होने के कारण आज उद्योगों के लिए बड़ी मुश्किले खड़ी हो रही हैं। इसका परिणाम है कि औद्योगिक उत्पादन की संवृद्धि दर अप्रैल माह में घटकर मात्र 0.1 प्रतिशत ही रह गई। इससे पिछले माह तो औद्योगिक उत्पादन की संवृद्धि दर ऋणात्मक हो गई थी। हाल ही में केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2011–12 में आर्थिक संवृद्धि दर 6.5 प्रतिशत पर अनुमानित की गई है। अर्थव्यवस्था के लगभग सभी क्षेत्रों में निराशा का माहौल है। कीमतें थमने का नाम नहीं ले रही। उद्योग जगत रिजर्व बैंक की ओर आशा से देख रहा है कि वह ब्याज दरे घटाए ताकि औद्योगिक लागत घटे।

सरकार उचित विकल्पों को अपनाकर स्थिति में सुधार लाने की बजाय अर्थव्यवस्था की बदहाली का सारा दोष अंतर्राष्ट्रीय कारणों पर डालने का प्रयास कर रही है। उसका कहना है कि रुपए की कमजोरी कच्चे तेल की कीमतों के बढ़ने और यूरोपीय संकट के कारण है। वास्तव में यदि रूपए की कमजोरी कच्चे तेल की कीमतों के कारण थी तो कच्चे तेल की कीमते पिछले लगभग एक माह से गिर रही हैं, तो भी रुपए की कमजोरी क्यों बदस्तूर जारी है? यदि यूरोपीय संकट इसके लिए जिम्मेदार है तो उभरती अर्थव्यवस्थाओं में भारत की मुद्रा ही क्यों कमजोर हो रही है? इन सवालों के जवाब सरकार के पास नहीं है।

हम याद दिलाना चाहते हैं कि स्वदेशी पत्रिका ने समय समय पर सरकार को उदारीकरण के नाम पर गलत नीतियों पर चलने के विरूद्ध चेताया था, लेकिन सरकार ने उस पर ध्यान नही दिया। आयातों की अंधाधुंध नीति के चलते वर्ष 2011–12 में आयात 488 अरब डॉलर के रिकार्ड स्तर पर पहुंच गए, जबकि निर्यात मात्र 303 अरब डॉलर ही रहे। ऐसे में देश का व्यापार घाटा 185 अरब डॉलर के खतरनाक स्तर पर पहुंच गया, जो जी.डी.पी. के 11 प्रतिशत से भी ज्यादा है। सोने का आयात 2011–12 में 50 बिलियन डॉलर तक पहुँच गया, जोकि 2010–11 में 25 बिलियन डॉलर था। सोने का बढ़ता आयात रूपये के लिए मुश्किलें खड़ी कर रहा है। यह बताना ठीक होगा कि 2–जी घोटाला, कामनवेल्थ घोटाला और सोने का आयात, तीनों जुड़े हुए है और घोटालों के कालेधन को सोने के रूप में परिवर्तन किया जा रहा है। कच्चे तेल का आयात बढ़ता जा रहा है। यह सच है कि अन्तर्राष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतों पर हमारा ज्यादा नियंत्रण नही है लेकिन हम निश्चित रूप से निर्णय कर सकते है कि आयात का स्रोत क्या हो। यदि हम ईरान से कच्चे तेल का आयात करें तो हम डॉलर की बजाय 45 प्रतिशत भुगतान रूपये में कर सकते है। दुर्भाग्यपूर्ण है कि हाल ही में सरकार ने कहा है कि ईरान से कच्चे तेल का आयात कम किया जायेगा। गौरतलब है कि ईरान से तेल का आयात अप्रैल 2012 में मार्च 2012 की तुलना में 34 प्रतिशत कम हो गया। ऐसा दिखता है यह अमेरिका के प्रभाव में किया जा रहा है। इससे रूपया और कमजोर हो सकता है। विदेशी संस्थागत निवेशकों को देश के शेयर बाजारों में आने की खुली छूट दी जाती रही है। पश्चिमी यूरोप में संकट के कारण विदेशी संस्थागत निवेशक भारत से पूंजी उड़ा कर ले जा रहे हैं जिससे विदेशी मुद्रा की मांग बढ़ रही है जो भारतीय मुद्रा के अवमूल्यन का कारण बन रही है। इससे पहले भी कई अवसरों पर विदेशी निवेशकों ने इसी प्रकार की रणनीति अपनाई जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था को खासा नुकसान पहुंचा। सरकार तब भी असंवेदनशील थी और आज भी। दुर्भाग्यपूर्ण है कि विदेशी संस्थागत निवेशकों की भारी अनुशासनहीनता के बाद भी उन पर कोई नियंत्रण नही किया जा रहा है और सरकार हाथ पर हाथ रखकर बैठी है। महत्वपूर्ण बात यह है चीन से हमारा आयात लगातार बढ़ता जा रहा है जिसके कारण चीन के साथ हमारा व्यापार घाटा 25 अरब डॉलर तक पहुंच गया है। चीन से बढ़ता आयात हमारे घरेलू छोटे और मध्यम उद्योगों को साथ–साथ इन्फ्रास्ट्रचर और मशीनरी उद्योग में लगी हमारी कपंनियो को भी भारी नुकसान पहुंचा रहा है। भारत हेवी इलेक्ट्रीक्ल लिमिटेड, लारसन एण्ड टुबरो सरीखी हमारी बड़ी–बड़ी कंपनियां ऑर्डर न मिलने के कारण मुश्किल में हैं।

स्थिति की गंभीरता के मद्देनजर सोने के आयात पर प्रभावी नियंत्रण लगाने की जरूरत है। बजट 2012–13 में आयतित सोने पर आयात शुल्क बढ़ाना अच्छा कदम है। लेकिन हमारा मानना है कि यह पर्याप्त नही होगा बढ़ते सोने के आयात को कम करने के लिए हमें सोने के आयातों पर मात्रात्मक नियंत्रण लगाने होगें। विदेशी संस्थागत निवेशकों पर प्रभावी नियंत्रण लगाने की जरूरत है। जरूरी है कि उनके निवेशों पर न्यूनतम 3 वर्ष का लॉक इन पीरियड लागू किया जाए और लाभांशों को बाहर ले जाने की स्थिति में ब्राजील की तर्ज पर कर लगाया जाये। अमरीकी दबाव को दरकिनार करते हुए, कम करने के बजाए ईरान से कच्चे तेल का आयात बढ़ाना होगा और इस संबंध में तथाकथित तकनीकी मुश्किलों को दूर किया जाए। साथ ही चीन से आयातों को कम करने के लिए ठोस रणनीति अपनाई जाए और इस संदर्भ में फाइटो सेनिटरी और स्वास्थ्य उपाय एंटी डम्पिंग ड्यूटी और सुरक्षा के मुद्दे उठाते हुए चीन से आयातों को न्यूनतम किया जाए। सरकार मूक दर्शक बने रहने की बजाय उचित कदम उठाए यह समय की जरूरत है।

बदहाल अर्थव्यवस्था : बदहवास सरकार

सरकार उपलब्ध विकल्पों का भी सही मायनों में उपयोग नहीं कर रही। हमारे तेल आयातों के डॉलर बिल को कम करने का एक उपाय ईरान से अधिकाधिक तेल का आयात है। लेकिन अमरीका के दबाव के चलते अप्रैल माह में ईरान से तेल का आयात 34 प्रतिशत कम हो गया। आज जरूरत इस बात की है कि सरकार रूपये की गिरावट को थामने के लिए सोने चांदी के आयात पर मात्रात्मक नियंत्रण लगाये, चीन से आयातों पर अंकुश लगाया जाये और कीमतों को थामते हुए ब्याज दरों को कम किया जाये। सरकारी खर्च पर काबू करना भी निहात जरूरी है लेकिन इस बाबत नाटक नहीं ठोस उपाय करने होंगे।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन द्वारा वर्ष 2011–12 की अंतिम तिमाही के नतीजे 31 मई 2012 को प्रकाशित हुये हैं, जिनके अनुसार वर्ष 2011–12 के लिए सकल घरेलू उत्पाद यानि जीडीपी की संवृद्धि की दर को संशोधित कर 6.5 प्रतिशत पर रखा गया है। गौरतलब है कि पिछले वर्ष 2010–11 में आर्थिक संवृद्धि की दर 8.4 प्रतिशत थी। आर्थिक संवृद्धि दर में इस कमी को कोई विशेष आश्चर्य से नहीं देखा जा रहा। क्योंकि वर्ष 2011–12 की दूसरी और तीसरी तिमाही में कोई बहुत अच्छे नतीजे नहीं आये थे। इस वर्ष अर्थव्यवस्था के लगभग हर क्षेत्र में संवृद्धि दर घटी है। कृषि में वर्ष 2010–11 में 7 प्रतिशत की संवृद्धि दर की तुलना में 2011–12 में 2. 8 प्रतिशत की ही संवृद्धि दर रही है। खनन क्षेत्र में तो संवृद्धि दर एक प्रतिशत ऋणात्मक हो गई है, जो पिछले वर्ष 5 प्रतिशत थी। फैक्ट्री क्षेत्र में लगातार हर

तिमाही में नतीजे खराब से खराब होते रहे और अंतिम तिमाही में तो ये 0.3 प्रतिशत ऋणात्मक हो गए। पहली तिमाही में 7.3 प्रतिशत की संवृद्धि के चलते वार्षिक संवृद्धि दर 2.5 प्रतिशत तक पहुंच पाये। बिजली, गैस और वाटर सप्लाई में पिछले वर्ष से बेहतर नतीजे देखने को मिले हैं। हमेशा की भांति सेवा क्षेत्र में आर्थिक संवृद्धि दर पिछले वर्ष के समानांतर रही।

जीडीपी की आर्थिक संवृद्धि के ये आंकड़ें अर्थव्यवस्था की बिगड़ती सेहत को बयान करते हैं। ये महज आंकड़े नहीं हैं, बल्कि अर्थव्यवस्था में पिछले कुछ समय से जो बदहाली की स्थिति उत्पन्न हुई है उसकी परिणिति को दर्शाते हैं। अर्थव्यवस्था के सेहत के कुछ प्रतीक होते हैं, जैसे– देश की मुद्रा का अन्य विदेशी मुद्राओं के संदर्भ में मूल्य, मुद्रा स्फीति की दर और ब्याज दरें, व्यापार एवं भुगतान शेष, राजकोषीय घाटा इत्यादि। संयोग से हमारे देश की कमान अर्थशास्त्रियों के हाथ में है और वे इन प्रतीकों के महत्व को भली भांति समझते हैं। लेकिन ऐसा लगता है कि अर्थव्यवस्था के हालात अब उनके काबू में नहीं है।

रूपये की दुर्गति

पिछले कुछ समय से भारतीय रूपया विदेशी मुद्राओं की तुलना में लगातार कमजोर होता जा रहा है। फरवरी 2012 यानि मात्र 3–4 माह पहले रूपये की डॉलर में विनिमय दर 48.7 रूपये प्रति डॉलर थी, हाल ही में 56 रूपये प्रति डॉलर से भी अधिक हो गयी। माना जाता है कि बढ़ता व्यापार घाटा इसका कारण है और बढ़ते व्यापार घाटे के लिए जिम्मेवार है, बढ़ता सोने–चांदी का आयात, बढ़ती अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमतें और चीन से लगातार बढ़ता आयात। इसके अलावा रूपये की कमजोरी के लिए विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा

बड़े पैमाने पर विदेशी मुद्रा का अंतरण भी काफी हद तक जिम्मेदार माना जा रहा है। अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमतें थमने के बाद भी रूपये की गिरावट थमने का नाम नहीं ले रही, क्योंकि रूपये के गिरावट के दूसरे सभी कारण बदस्तूर जारी हैं। भारतीय रिजर्व बैंक भी रूपये की गिरावट को थामने के लिए रस्म अदायगी के अलावा कुछ नहीं कर रहा है।

लगातार बढ़ती मुद्रा स्फीति

पिछले लगभग 3 वर्षों से कीमतों में वृद्धि लगातार जारी है। प्रारम्भ में मुद्रा स्फीति बढ़ने के लिए खाद्य पदार्थों की कीमतों में वृद्धि ज्यादा जिम्मेवार रही और इसे नाम दिया गया खाद्य मुद्रा स्फीति। कृषि की लगातार अनदेखी और बढ़ती आमदनियों के कारण खाद्य वस्तुओं की मांग और पूर्ति में असंतुलन बढ़ता गया और उसका असर खाद्य मुद्रा स्फीति पर देखने को मिला। लेकिन वर्ष 2011–12 की पहली तिमाही को छोड़ लगातार हर तिमाही में फैक्ट्री उत्पादन की घटती संवृद्धि दर के चलते अखाद्य वस्तुओं की कीमतों में भी भारी वृद्धि होने लगी और अब मुद्रा स्फीति केवल खाद्य मुद्रा स्फीति नहीं रही। इन सबके कारण वर्ष 2011–12 में मुद्रा स्फीति की दर 7 प्रतिशत से 11 प्रतिशत के बीच झूलती रही।

पिछले 3–4 माह से रूपये के कमजोर होने से आयातित वस्तुओं विशेषतौर पर पेट्रोलियम उत्पादों, धातुओं और अन्य प्रकार के कच्चे माल की कीमतों में वृद्धि से मुद्रा स्फीति और ज्यादा भयंकर स्तर पर पहुंच चुकी है। बढ़ता राजकोषीय घाटा मुद्रा स्फीति को और अधिक हवा दे रहा है। इन सबके बावजूद सरकार कीमतों को थामने में लगातार असमर्थ दिखाई दे रही है।

लगातार बढ़ती ब्याज दरें

महंगाई को थामने के नाम पर भारतीय रिजर्व बैंक ने डेढ़ वर्ष से भी कम समय में लगातार 13 बार रेपोरेट और रिवर्स रेपोरेट बढ़ाकर देश में ब्याज दरों में भारी वृद्धि का काम किया। गौरतलब है कि वर्ष 2000 से जब ब्याज दरें घटनी शुरू हुई थी, कुछ ऐसे वर्ग जो ब्याज की आय पर निर्भर करते थे, उन्हें कुछ नुकसान अवश्य हुआ, लेकिन अर्थव्यवस्था को गति देने में ब्याज दरों में कमी की विशेष भूमिका रही।

घटती ब्याज दरों ने देश में घरों, कारों, अन्य उपभोक्ता वस्तुओं इत्यादि की मांग में अभूतपूर्व वृद्धि की। कम ब्याज दरों के चलते सरकार द्वारा अपने पूर्व में लिए गए ऋणों पर ब्याज अदायगी पर भी अनुकूल असर पड़ा। हाऊसिंग, इन्फ्रास्ट्रक्चर और अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में तेजी से विकास होना शुरू हुआ और देश दुनिया की सबसे तेज बढ़ने वाली अर्थव्यवस्थाओं में चीन के बाद दूसरे स्थान पर आ गया। यानि कहा जा सकता है कि भारत की आर्थिक संवृद्धि की गाथा में ब्याज दरों के घटने की एक प्रमुख भूमिका रही है।

भारतीय रिजर्व बैंक ने दो माह पूर्व ब्याज दरों में हल्की सी कमी जरूर की थी, लेकिन उसके बाद वह इस बाबत और हिम्मत नहीं जुटा पाया। बढ़ती ब्याज दरों के कारण अर्थव्यवस्था में घरों, स्थाई उपभोक्ता वस्तुओं, पूंजी निवेश, इंफ्रास्ट्रक्चर निवेश इत्यादि बुरी तरह से प्रभावित हुए है और उसका असर आर्थिक संवृद्धि के आंकड़ों पर साफतौर पर दिखाई देता है।

व्यापार घाटा और राजकोषीय घाटा

एक ओर आयातों में भारी वृद्धि और निर्यातों में कहीं कम वृद्धि के कारण हमारा व्यापार घाटा लगातार बढ़ता जा रहा है, सरकारी खर्च में वृद्धि और राजस्व में उसके अनुपात में कम वृद्धि के चलते हमारा राजकोषीय घाटा पिछले वर्ष लगभग 6 प्रतिशत पहुंच गया और अगले वर्ष भी उसमें कमी के कोई आसार नजर नहीं आ रहे। इस दोहरे घाटे का असर देश के अर्थव्यवस्था पर दिखाई दे रहा है।

वर्ष 2010–11 में हमारा व्यापार घाटा 130 अरब डॉलर तक पहुंच गया था और उसे भी पाटना बहुत कठिन काम था, लेकिन इस वर्ष 2011–12 में यह व्यापार घाटा बढ़कर 185 अरब डॉलर तक पहुंच चुका है, जिसकी किसी भी हालत में भरपाई नहीं हो सकती। यह हमारे रूपये को और भी कमजोर कर रहा है।

अर्थव्यवस्था की इन तमाम बदहालियों के बावजूद सरकार नीतिगत विकल्प सुझाने में पूर्णतया सफल दिखाई दे रही है। यही नहीं सरकार उपलब्ध विकल्पों का भी सही मायनों में उपयोग नहीं कर रही। हमारे तेल आयातों के डॉलर बिल को कम करने का एक उपाय ईरान से अधिकाधिक तेल का आयात है। लेकिन अमरीका के दबाव के चलते अप्रैल माह में ईरान से तेल का आयात 34 प्रतिशत कम हो गया। आज जरूरत इस बात की है कि सरकार रूपये की गिरावट को थामने के लिए सोने चांदी के आयात पर मात्रात्मक नियंत्रण लगाये, चीन से आयातों पर अंकुश लगाया जाये और कीमतों को थामते हुए ब्याज दरों को कम किया जाये। सरकारी खर्च पर काबू करना भी निहात जरूरी है लेकिन इस बाबत नाटक नहीं ठोस उपाय करने होंगे। ❑

स्वदेशी जागरण मंच की राष्ट्रीय परिषद् की बैठक 19–20 मई 2012 आगरा (उत्तर प्रदेश) में सम्पन्न हुई। बैठक में तीन प्रस्ताव पारित किए गए जिन्हें हम पाठकों के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।

पारित प्रस्ताव–1

प्रौद्योगिकी समुन्नयन में बाधक उदारीकरण चिन्ताजनक

आर्थिक उदारीकरण के फलस्वरूप प्रौद्योगिकी विकास अवरूद्ध होने से देश, उच्च प्रौद्योगिकी आधारित अधिकांश क्षेत्रों में उत्तरोत्तर पराश्रित होता जा रहा है। उच्च प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में यह बढ़ा परावलम्बन देश की आर्थिक संवृद्धि, व्यापार संतुलन विनियम रोजगाार एवं अन्तर्बाह्य सुरक्षा की दृष्टि से चिन्ताकारी सिद्ध हो रहा है। उदारीकरण के अधीन आयात व विदेशी निवेश, प्रोत्साहन एवं विश्व व्यापार संगठन के अधीन अपनायी गई नई पेटेन्ट व्यवस्था व व्यापार संबंधी निवेश प्रावधानों के परिणामस्वरूप देश के सफल औद्योगिक उत्पादन के उच्च प्रौद्योगिकी आधारित प्रक्रियाओं व अदायों का अनुपात घट रहा है।

दूरसंचार के क्षेत्र में प्रथम पीढ़ी के प्रथम चरण प्रौद्योगिकी विकास के आगे, 2जी, 3जी व 4जी प्रौद्योगिकी विकास के लिये कोई प्रयास नहीं किये जाने से चौथी पीढ़ी तक की दूरसंचार प्रौद्योगिकी व उसके साज सामानों के लिये पूरी तरह चीन पर अवलम्बित हो गया है। इससे देश के व्यापार संतुलन से लेकर हमारी अन्तर्बाह्य सुरक्षा तक संकटापन्न हो रही है। अब यही स्थिति विद्युज्जन के क्षेत्र में होने को है। वर्तमान में विद्युज्जन के संयंत्रों के सारे प्रमुख आदेश चीन के पक्ष में जाने से सुपरक्रिटिकल पर अल्ट्रामेगा संयंत्रों के लिये देश स्थायी रूप से चीन पर अवलम्बित हो रहा है।

विवेकहीन आयात व विदेशी निवेश प्रोत्साहन के फलस्वरूप सामान्य उपभोक्ता उत्पादों से लेकर स्वचाति वाहन, अन्य टिकाऊ वस्तुओं, विद्युतीय साज सामान, भार, मशीनरी, रसायन, औषधि–उद्योग, कृषि–रसायन, निर्माण, वस्त्रोत्पादन मशीनरी, खनन मशीनरी, उच्च क्षमतायुक्त सूचना प्रौद्योगिकी, साज सामान व अवसंरचना विकास पर्यन्त सभी क्षेत्रों में देश तेजी से पिछड़ता जा रहा है। इस बात को हाल ही में भुवनेश्वर में सम्पन्न 99वें भारतीय विज्ञान सम्मेलन में प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह भी स्वीकार चुके हैं।

अनुसंधान व विकास पर भारत का वास्तविक निवेश अत्यन्त स्वालम्ब हैं। जहाँ अनुसंधान व विकास पर इजराइल, स्वीडन, जापान, इंग्लैण्ड, दक्षिण कोरिया, ताइवान, अमरीका, सिंगापुर व चीन का निवेश उनके सफल घरेलू उत्पाद का क्रमशः 4.2, 3.2, 3.3, 3.1, 3.00, 3.02, व 1.4, 4.21 है, जबकि भारत का निवेश 1.00 प्रतिशत से भी कम है। भारत के सकल अनुसंधान व विकास व्यय में सार्वजनिक कोषों का अंश भी सतत गिर रहा है।

भ्रष्टाचार के चलते घटिया आयातों को प्राथमिकता के कारण देश के निजी क्षेत्र में प्रौद्योगिकी विकास की गति भी प्रभावित हो रही है। सेना के लिये यंत्र शीतलीकरण यूरो–3 मानक वाले ट्रक जहां देश से ही आधे से कम मूल्य पर खरीदे जाकर घरेलू उत्पादको के उत्पादन अनुभव से प्रौद्योगिकी समुन्नयन का लाभ दिया जा सकता था। वहीं तिगुनी कीमत देकर 5000/–करोड़ रूपये लागत के अप्रचलित प्रौद्योगिकी टाट्रा ट्रक खरीद जैसे अनेक भ्रष्टाचार में डूबकर लिये निर्णय देश को रक्षा के क्षेत्र तक में परावलम्बित कर रहे हैं।

इसलिये स्वदेशी जागरण मंच की राष्ट्रीय परिषद सरकार को चेतावनी देती है कि उच्च प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में देश को आयातों पर परावलम्बित करने के स्थान पर देश के प्रौद्योगिकी विकास को प्राथमिकता देते हुये उच्च प्रौद्योगिकी आधारित व उत्पादों के उत्पादन में देश को स्वावलम्बी बनाने का पालन करें। इस हेतु रक्षा व सूचना प्रौद्योगिकी सहित सभी ज्ञान आधारित उद्योगों में अनुसंधान, विकास व स्वावलम्बन को उच्च प्राथमिकता को राष्ट्रीय परिषद देशवासियों से भी आश्वासन करती है कि देश में उच्च प्रौद्योगिकी के विकास हेतु सरकार पर जन दबाव बनाने के साथ ही अधिकतम स्वदेशी भाव लाते हुये उच्च प्रौद्योगिकी की आधारित उत्पादों सहित सभी उत्पादों को प्राथमिकता है। ❑

पारित प्रस्ताव – 2

विदेशी शैक्षिक संस्थान विधेयक वापस लो

''स्वदेशी जागरण मंच का यह मानना है कि शिक्षा किसी भी देश व समाज के विकास का आधार है और किसी भी देश का विकास वहां की शिक्षा के समानुपात में ही होता है। लेकिन आर्थिक नवउदारीकरण के दौर में शिक्षा को आर्थिक वस्तु की श्रेणी में रख कर देश के शिक्षा क्षेत्र में विदेशी संस्थाओं को लाभ देने की मानसिकता के कारण केंद्र सरकार जानबूझ कर शिक्षा से अपना हाथ खींच रही है।''

स्वदेशी जागरण मंच की यह राष्ट्रीय परिषद् देश में विदेशी विश्वविद्यालयों को प्रवेश की अनुमति देने के लिए केंद्र सरकार द्वारा लाये जा रहे Foreign Educational Institutions (Regulation of Entry and Operations) Bill पर गंभीर चिंता प्रकट करती है। केबिनेट में इस विधेयक को मंजूरी मिलने के बाद इसे संसद में ले के आने की तैयारी चल रही है। हालांकि इस विषय पर बनी संसद की स्थायी समिति के सम्मुख बहुत से संगठनों ने इस विषय पर अपनी चिंताए प्रकट की है। देश के कई शिक्षाविद, विश्वविद्यालयों के उपकुलपति तथा ज्यादातर छात्र संगठन सरकार के इस प्रस्तावित विधेयक स्वरूप में संसद में ले कर आना बिलकुल भी उचित नहीं होगा तथा ऐसे किसी भी प्रयास का स्वदेशी मंच कड़ा विरोध करेगा।

स्वदेशी जागरण मंच का यह सुनिश्चित मत है की इस वर्तमान विधेयक के कारण से देश में ऐसे विदेशी विश्वविद्यालयों की बाढ़ आ जाएगी जिनका उद्देश्य सिर्फ लाभ कमाना होगा। चीन और अमरीका के बाद भारत उच्च शिक्षा में तीसरे नंबर पर है।

भारत में उच्च शिक्षा में Gross Enrollment Ratio 1950–51 में 0.7 प्रतिशत से बढ़ कर 15 प्रतिशत तक पहुँच चुकी है। इस समय उच्च शिक्षा में 1.4 करोड़ विद्यार्थी पंजीकृत हैं और हर साल 24 लाख विद्यार्थी स्नातक हो रहे हैं। बढ़ती युवा आबादी तथा उच्च शिक्षा के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण देश में उच्च शिक्षा देने वाले संस्थानों की मांग तेजी से बढ़ रही है। हालांकि भारत में इस क्षेत्र में निजी व्यापार का हिस्सा अभी मात्र 5 प्रतिशत ही है फिर भी 2012 में भारत में इस क्षेत्र में 78 बिलियन डालर का व्यापार होने की संभावना है। उच्च शिक्षा में व्यापार की बढ़ती संभावनाओं के कारण ही अब दुनिया भर की बाजारी शक्तियों की नजर इस क्षेत्र पर है। इस बात की प्रबल आशंका है की सरकार का यह वर्तमान विधेयक इन बाजारी शक्तियों को भारत में प्रवेश का एक माध्यम बन जायेगा।

स्वदेशी जागरण मंच का यह मानना है की शिक्षा किसी भी देश व समाज के विकास का आधार है और किसी भी देश का विकास वहां की शिक्षा के समानुपात में ही होता है। लेकिन आर्थिक नवउदारीकरण के दौर में शिक्षा को आर्थिक वस्तु की श्रेणी में रख कर देश के शिक्षा क्षेत्र में विदेशी संस्थाओं को लाभ देने की मानसिकता के कारण केंद्र सरकार जानबूझ कर शिक्षा से अपना हाथ खींच रही है। संख्या की दृष्टि से अगर हम देखें तो देश में विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों की अति विशाल संख्या के बावजूद भी विश्व के शीर्ष 200 शैक्षिक संस्थानों में भारत का एक भी संस्थान नहीं है। उच्च शैक्षिक संस्थानों में गैर जरूरी राजनैतिक हस्तक्षेप, अध्यापकों के बड़ी मात्रा में रिक्त स्थान, उच्च व तकनीकी शिक्षा के नियामक अधिकारणों में लगाातार फैलता भ्रष्टाचार आदि अनेक ऐसे कारण हैं जिससे भारत की उच्च शिक्षा की स्थिति लगातार बदतर होती जा रही हैं। सरकार की नीतियों के कारण से शिक्षा का व्यापारीकरण लगातार बढ़ता जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा आज आम विद्यार्थी की पहुँच से बाहर होती जा रही है। ऐसी परिस्थितियों में सरकार द्वारा प्रस्तावित इस विधेयक में शैक्षिक शुल्क एवं प्रवेश के निर्धारण का सम्पूर्ण अधिकार विदेशी संस्थाओं को सौंपने का प्रावधान शिक्षा के व्यापारीकरण को बढ़ावा देने वाला साबित होगा।

सरकार द्वारा प्रस्तावित इस बिल में हालांकि यह प्रावधान किया गया है कि जो भी विदेशी शिक्षा संस्थान भारत में आना चाहते हैं उनका अपने देश में 20 साल का अनुभव शिक्षा क्षेत्र में होना चाहिये, इन संस्थानों को 50 करोड़ रुपये का कॉर्पस फंड जमा करना होगाा। विदेशी संस्थान अपने लाभ को वापिस नहीं ले जा सकेंगे तथा इन संस्थानों के विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा अन्य कई नियामक संस्थानों में पंजीकरण करना होगाा। ऐसे कई और नियत्रंण विदेशी संस्थानों पर

लगााये गये हैं। परन्तु दूसरे क्षेत्रों में विदेशी पूँजी निवेश का अनुभव यह बताता है कि विदेशी संस्थान ऐसे सब नियंत्रणों में से भी सस्ता निकल कर देश को लूट रहे हैं। इस विधेयक की ही एक धारा में सरकार ने उनका रास्ता दे दिया है जिसमें कहा गया है की सरकार एक सलाहकार बोर्ड की अनुशंसा के आधार पर किसी भी उच्च गुणवत्ता वाली संस्था को इन नियंत्रणों से छूट दे सकती है। इसलिए स्वदेशी जागरण मंच का यह सुविचाारित मत है कि सरकार द्वारा विदेशी संस्थानों पर नियंत्रण लगाने के लिए इस विधेयक में जो प्रावधान किये गये हैं वह पर्याप्त नहीं हैं।

सरकार द्वारा लाये जा रहे इस विधेयक के पक्ष में यह तर्क दिया जा रहा है कि भारत से हर वर्ष बड़ी संख्या में विद्यार्थी विदेश में पढ़ने के लिए जा रहे हैं। अगर विदेशी शिक्षा संस्थान भारत में अपने परिसर स्थापित कर लेंगे तो भारत के इन विद्यार्थियों को देश में ही अच्छी शिक्षा मिल पाएगी तथा इस कारण से देश की विदेशी मुद्रा की भी बचत होगी।

परन्तु अगर हम इस तथ्य का गहनता से विश्लेषण करें तो ध्यान में आता है की विदेश जाने वाले ज्यादातर विद्यार्थियों का लक्ष्य शिक्षा के साथ साथ नौकरी करना और पैसा कमाना है। इसलिए इस विषय मे विदेशी संस्थानों का भारत में आना ज्यादा मददगार साबित होगा बल्कि यह विदेशी संस्थान भारत के विद्यार्थियों का शोषण कर भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा को देश से बाहर ले जायेंगे।

इसके साथ ही इस बात की भी पूरी संभावना है कि ज्यादा वेतन के लालच में कई योग्य अध्यापक भारतीय संस्थान छोड़कर विदेशी संस्थानों में चलें जाएंगे, जिसका परिणाम यह होगा कि पहले से ही योग्य अध्यापकों की कमी से जूझ रहे भातीय संस्थानों के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लग जायेगा।

इसके साथ ही इस बात पर भी विचार होना चाहिए कि गरीब एवं पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों को आरक्षण देने की क्या व्यवस्था इन संस्थानों में रहेगी? भारत के ही निजी संस्थान अभी तक गरीब और समाजिक रूप से पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के आरक्षण देने के लिए तैयार नहीं है तो ऐसे में विदेशी संस्थानों से यह अपेक्षा की ही नहीं जा सकती। इसलिए इस बात की भी संभावना बहुत अधिक है कि इसके कारण से समाजिक तनाव की स्थिाति बन जाएगी क्यों यह संस्थान सिर्फ अमीर वर्ग के विद्यार्थियों को ही शिक्षा दे पायेंगे तथा देश के ज्यादातर विद्यार्थियों की पहुँच से बाहर रहेंगे।

इसके साथ ही इस बात का विचार करना होगा कि क्या इन विदेशी शिक्षा संस्थानों के पाठ्यक्रम भारत की राष्ट्रीय आवश्यकता के अनुरूप होंगे, जिनमें भातीय मूल्य एवं संस्कारों की शिक्षा को शामिल किया जायेगा? इन संस्थानों के शिक्षा देने का माध्यम क्या भारत कि भाषाओं में भी होगा? इस जैसे कई महत्वपूर्ण विषयों पर विधेयक में उल्लेख न होना देश के लिए गंभीर चिंता का विषय है।

स्वदेशी जागरण मंच का यह मानना है कि सरकार को इस विषय में बहुत सावधानी से आगे बढ़ना चाहिए। विदेशी संस्थानों को देश के विद्यार्थियों की लूट करने की खुली छूट देने वाला यह विधेयक देश के हित में नहीं है। इसलिए स्वदेशी जागरण मंच की यह राष्ट्रीय परिषद सरकार से मांग करती हैः– विदेशी शैक्षिक संस्थान विधेयक तुरंत वापिस लिया जाये। ❑

पारित प्रस्ताव–3

विदेशी निवेश पर अतिनिर्भरता बर्बादी का कारण

''मंच की राष्ट्रीय परिषद ने प्रस्ताव पास कर केंद्र से यह मांग की है कि विदेशी पूंजी निवेशकों कों प्रोत्साहित के बजाए घरेलू निवेशकों को प्रोत्साहन दिया जाए। विदेशी निवेशकों पर कम से कम से कम तीन साल निवेश बनाए रखने के लिए समय सीमा निर्धारित की जाए। ब्राजील की तरह विदेशी कंपनियों की आय पर भी कर लगाया जाए। मॉरीशस मार्ग से देश में पूंजी लगाने वाली विदेशी कंपनियों को मिल रही कर छूट को बंद किया जाए।''

स्वदेशी जागरण मंच की यह स्पष्ट मान्यता है कि देश की आर्थिक बदहाली के लिए मूलतः विदेशी निवेश पर सरकार की अतिनिर्भरता ही जिम्मेदार है। विदेशी निवेशकों को आकर्षित करने के लिए सरकार द्वारा लगातार नए प्रलोभन दिए जाते रहे हैं और अब स्थिति यहां तक आ पहुंची है कि सरकार विदेशी निवेशकों के दबाव में काम कर रही है।

हाल ही में प्रधानमंत्री के आर्थिक सलाहकार का यह बयान कि देश के मौजूदा संकट का कारण सरकार द्वारा खुदरा व्यापार के क्षेत्र में विदेशी निवेश को मंजूरी न देना है, यह इंगित करता है कि मौजूदा सरकार किस तरह से विदेशी निवेशकों के इशारे पर चलने के लिए विवश है। जब तक विदेशी निवेश के मोह को छोड़ा नहीं जाता और स्वदेशी के सार्थक विकल्प अपनाए नहीं जाते तब तक देश की हालत सुधर नहीं सकती।

जब से देश में उदारीकरण के नाम विदेशी निवेशकों को मनमानी करने की छूट दी गई है, तभी से ही भारत का व्यापार घाटा लगातार बढ़ता जा रहा है। धीरे–धीरे विदेशी कंपनियां घरेलू कंपनियों को निगलती जा रही है। ऑटो, टेलीकॉम और सेवा क्षेत्र में विदेशी कंपनियां भारतीय कंपनियों को कारोबार से बाहर करती जा रही है। और तो दवा के क्षेत्र में भी बाहर की कंपनियों देसी कंपनियों का अधिग्रहण तेजी से कर रही हैं। हमारी दस बड़ी दवा कंपनियों में से तीन पहले ही विदेशी कंपनियों का निवाला बन चुकी है।

हाल ही में जब यह तथ्य सामने आया कि स्वयं देश के स्वास्थ्य मंत्री ने सरकार से गुजारिश की है कि दवा के क्षेत्र में हो रहे अधिग्रहण को रोकने के उपाय किए जाए तो समझा जा सकता है कि विदेशी पूंजी पर निर्भरता से देश का कितना खतरा है।

यूरोप में आए आर्थिक संकट से रुपये के मूल्य में लगाातार गिरावट ने सबकी नींद उड़ा दी है। जहां पिछले वर्ष दिसंबर में रुपये की कीमत प्रति डॉलर 48.70 रुपये थी, वहीं अब इस समय 55 रूपये हो गई है। कोई भी आसानी से समझा सकता है कि रुपये की दुर्गति से हमारे आयातकों की हालत कितनी खस्ता हो गई है।

अभी भी हमारा व्यापार संतुलन नकारात्मक है, यानी हम निर्यात से ज्यादा आयात करते हैं। इसका सीधा अर्थ है कि हम तेजी से विदेशी मुद्रा का भंडार लुटा रहे हैं। सरकार पूरी तरह निकम्मी साबित हुई है। लगता है कि तमाशा देखने के अलावा उसके पास करने को कुछ भी नहीं है। यह डर है कि यदि यही हालात रहे तो मुद्रा स्फीति की दर भयानक रूप से बढ़ती चली जाएगी और आम नागरिकों का जीना मुहाल हो जाएगा।

एक तरफ तो सरकार लगातार विदेशी निवेशकों को मनमानी की छूट दे रही है। उनकी इच्छानुसार नियम कानून में परिवर्तन किए जा रहे हैं। ढांचागत क्षेत्र में भी उन्हें लूट की छूट दे दी गई है। कई तथ्य सामने आए हैं जिनसे साफ पता चलता है कि अपने भारी मुनाफे के लिए विदेशी कंपनियों ने परियोजना लागत में भारी वृद्धि कर देश का संसाधन लूट रहें है।

भारत के महालेखा परीक्षक ने भी चेताया है कि जिस तरह परियोजना लागत में विदेशी कंपनियां मनमानी बढ़ोतरी कर रही है, उन पर यदि रोक नहीं लगाई गई तो देश के लिए एक बड़ा संकट खड़ा हो जाएगां दूसरी तरफ सरकार अपने प्राकृतिक और मानव संसाधनों की घोर अपेक्षा कर रही है। कुल बजट का महज एक फीसदी कृषि क्षेत्र पर खर्च किया जा रहा है।

बीज से लेकर खाद तक के लिए किसानों को विदेशी कंपनियों का गुलाम बनाया जा रहा है। खून पसीना एक कर अच्छी फसल देने के बाद भी किसानों को उनकी उपज की खरीद सरकार नहीं कर रही है। किसानों के अनाज खुले में सड़ रहे हैं। डुगडुगी पीट कर प्रचार पाने में माहिर सरकार ले, आम आदमी से धोखा किया है। न तो रोजगार मिल रहे हैं और न वायदे के अनुसार खाद्य सुरक्षा।

आम नौकरी पेशा आदमी भी केंद्र सरकार से तंग आ गया है। महंगाई कम करने के नाम पर लगातार बैंक दरें बढ़ाने के कारण देश में पूंजीगत निवेश रूक सा गया है। अधिक ब्याज दर के कारण लोगों को धंधे चौपट हो रहे हैं। बैंक से मिलने वाले कर्ज की शर्तें भी मनमाने ढंग से कठिन कर दी गई है। देश को अभी तक किसी बड़े आर्थिक संकट से बचाए रखने वाली घरेलू बचत भी अब बुरी तरह प्रभावित हुई है।

मंच की राष्ट्रीय परिषद केंद्र सरकार से यह मांग करती है कि विदेशी पूंजी निवेशकों कों प्रोत्साहित के बजाए घरेलू निवेशकों को प्रोत्साहन दिया जाए। विदेशी निवेशकों पर कम से कम से कम तीन साल निवेश बनाए रखने के लिए समय सीमा निर्धारित की जाए।

ब्राजील की तर्ज पर विदेशी कंपनियों की आय पर भी कर लगाया जाए। मॉरीशस मार्ग से देश में पूंजी लगाने वाली विदेशी कंपनियों को मिल रही कर छूट को बंद किया जाए। चीन से आयात पर प्रतिबंध जगाया जाए। कृषि व छोटे उद्योगों को तत्काल आसान शर्तों पर पूंजी उपलब्ध करायी जाए। किसी भी कीमत पर खुदरा व्यापार के क्षेत्र में विदेशी निवेश को मंजूरी न दी जाएं अन्य औद्योगिक या आवासीय उपयोग के लिए कृषि योग्य भूमि का अधिग्रहण बंद किया जाए।

सरकार एक श्वेत पत्र लाकर विदेशी निवेशकों के कारण हुए नुकसान को सार्वजनिक करे। ❑

काले धन पर सफेद पर्दा

श्वेत–पत्र में सरकार ने यह नहीं बताया कि विदेशों में छिपा हुआ भारतीय काला धन कुल कितना है? उसने सिर्फ स्विस बैंकों का एक आंकड़ा दिया है। वह भी ऐसा कि जिससे सरकार की मिट्टी पलीद होती है। 2006 में वहां 23,373 करोड़ रूपए जमा था। 2010 में वे घटकर 9295 करोड़ रह गए। याने 14 हजार करोड़ रूपए गायब हो गए, वे कहां गए? या तो उन्हें दुनिया के अन्य अधिक सुरक्षित बैंकों में सरका दिया गया है या फिर विदेशी विनिवेश का चोला पहनाकर उन्हें फिर से भारत में खपा दिया गया है। इस धूर्तता के लिए कौन जिम्मेदार है?

■ डॉ. वेद प्रताप वैदिक

हमारी सरकार की साख इतनी गिर गई है कि उसने काले धन पर जो श्वेत–पत्र जारी किया है। उसे कोई कोरा कागज कह रहा है तो कोई खाली पत्र और कोई सफेद पर्दा! सरकार की साख पर तो उसी समय मोटा प्रश्न चिन्ह लग गया था जब सर्वोच्च न्यायालय ने उसकी मंशा पर उंगली उठा दी थी। अदालत का कहना था कि विदेशों में छिपे काले धन को वापस लाने की इच्छा इस सरकार में नहीं है। सरकार में यदि जरा–सी भी इच्छा–शक्ति होती तो वह इस श्वेत–पत्र का भरपूर इस्तेमाल करती और अदालत का संदेह दूर कर देती।

इस श्वेत–पत्र में सरकार ने यह नहीं बताया कि विदेशों में छिपा हुआ भारतीय काला धन कुल कितना है? उसने सिर्फ स्विस बैंकों का एक आंकड़ा दिया है। वह भी ऐसा कि जिससे सरकार की मिट्टी पलीद होती है। 2006 में वहां 23,373 करोड़ रूपए जमा था। 2010 में वे घटकर 9295 करोड़ रह गए। यानि 14 हजार करोड़ रूपए गायब हो गए, वे कहां गए? या तो उन्हें दुनिया के अन्य अधिक सुरक्षित बैंकों में सरका दिया गया है या फिर विदेशी विनिवेश का चोला पहनाकर उन्हें फिर से भारत में खपा दिया गया है। इस धूर्तता के लिए कौन जिम्मेदार है? क्या भारत सरकार नहीं? सरकार ने यह पता क्यों नहीं किया कि यह रूपया किनका था और स्विस बैंकों से वह कहां गया? इस रूपए को सरकार ने 2006 में ही क्यों नहीं धर दबोचा। यह तो दो साल पुराना आंकड़ा है।

इन दो वर्षों में बाबा रामदेव ने काला धन के विरूद्ध इतना प्रचंड आंदोलन छेड़ा है कि यदि सरकार 2012 का आंकड़ा खोजवाए तो शायद उसे पता चलेगा कि लगभग सारा काला धन ही गायब हो गया है।

इस श्वेत–पत्र में सरकार ने उन तरकीबों का जिक्र किया है, जिनका इस्तेमाल करके लोग अपने काले धन को

सरकार की साख पर तो उसी समय मोटा प्रश्न चिन्ह लग गया था जब सर्वोच्च न्यायालय ने उसकी मंशा पर उंगली उठा दी थी। अदालत का कहना था कि विदेशों में छिपे काले धन को वापस लाने की इच्छा इस सरकार में नहीं है। सरकार में यदि जरा–सी भी इच्छा–शक्ति होती तो वह इस श्वेत–पत्र का भरपूर इस्तेमाल करती और अदालत का संदेह दूर कर देती।

पहले विदेश भेजते हैं और फिर उसे भारत बुलवा लेते हैं। इस अपराध के हर दांव–पेंच को सरकार जानती है लेकिन सब कुछ जानते हुए भी वह कुछ नहीं करती।

अब तक उसने मोरिशिस और सिंगापुर के रास्ते भारत आनेवाले काले धन पर रोक क्यों नहीं लगाई? रोक लगाने का इंतजाम क्या वह तब करेगी, जब स्विस बैंकों में से ही नहीं, दुनिया के दूसरे बैंकों से भी सारा काला धन गायब हो जाएगा? ये ही वे प्रश्न हैं, जो सरकार और काले धनवालों के बीच मिली भगत का संदेह उत्पन्न करते हैं।

यदि इस श्वेत पत्र में सरकार यह बताती कि भारत और विदेशों में कुल काला धन कितना हो सकता है और उसे पकड़ने के लिए वह क्या–क्या कदम उठाने वाली है तो श्वेत–पत्र की कुछ प्रामणिकता बन जाती लेकिन सरकारी अनुमान तो गैर–सरकारी अनुमानों से भी ज्यादा गया बीता है।

यदि अंतरराष्ट्रीय वित्तीय पारदर्शिता संगठनों के अनुसंधानों को ही आधार बना लिया जाता तो अधिक प्रामाणिक आंकड़ा उभर सकता था। उसके साथ–साथ यदि विदेशी बैंकों के भारतीय खातेदारों के नाम भी प्रकट कर दिए जाते, खासतौर से उनके, जिन पर मुकदमे चल रहे हैं तो सरकार की साख बढ़ जाती लेकिन श्वेत–पत्र इस अदा से पेश किया गया है, मानो सरकार ने कालेधन पर एक सफेद पर्दा डाल दिया है।

इस श्वेत–पत्र पर प्रतिपक्षी दल भाजपा ने गहरा आक्षेप किया है, हालांकि उसके आग्रह पर ही इसे जारी किया गया है। इस श्वेत–पत्र के कारण अब बाबा रामदेव के आंदोलन को नई प्राण–वायु प्राप्त होगी।

इस श्वेत–पत्र में काले धन को रोकने और पकड़ने के कई उपाय सुझाए गए हैं। जैसे संपत्ति के क्रय–विक्रय पर तत्काल कर लगाया जाए, बड़े लेन–देन चेक और क्रेडिट–डेबिट कार्डों से किए जाए, तथा पेन नंबर बताना अनिवार्य हो, कर छूट दी जाए, वित्तीय अपराधों के लिए द्रुत न्यायालय बनें, दोषियों को कठोर सजा दी जाए, लोकपाल और लोकायुक्त नियुक्त किए जाएं लेकिन क्या इन पवित्र इरादों से काला धन खत्म हो जाएगा या पकड़ा जाएगा?

ये सब सुझाव तो विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्री या सुविज्ञ पत्रकार भी दे सकते हैं लेकिन सरकार का काम सुझाव देना नहीं, उन्हें लागू करना है। कितनी विडंबना है कि इधर श्वेत–पत्र में लोकपाल और लोकायुक्त की बात कही गई और उसके कुछ घंटे बाद ही लोकपाल के मामले को प्रवर समिति की दरी के नीचे सरका दिया गया, अगले तीन महिने के लिए टाल दिया गया।

काले धन के मामले में इस सरकारी टाल–मटोल का मूल कारण क्या है? वह कौनसा रहस्य है, जिसके कारण इस मामले में सरकार बिल्कुल असहाय–निरूपाय मालूम पड़ती है? इसका रहस्य यही है कि काले धन के बिना इस देश में कोई भी पार्टी सरकार बना ही नहीं सकती।

देश की दोनों प्रमुख पार्टियों ने अपना जो सालाना हिसाब प्रकट किया है, वह सैकड़ों करोड़ रूपए का है। यह तो प्रकट हिसाब है और जो अप्रकट है याने जो बेहिसाब हिसाब है, वह तो हजारों करोड़ रूपए का है।

500 से ज्यादा उम्मीदवारों को सिर्फ चुनाव लड़ाने पर कितने हजार करोड़ रूपए खर्च होते होंगे? यह पैसा कैसा है? क्या यह काला धन नहीं है? जिस धन के बिना किसी राजनीतिक दल की दुकान एक दिन भी नहीं चल सकती, उसे यह सरकार भला खत्म कैसे कर सकती है? अपने पांव पर नेतागण कुल्हाड़ी क्यों मारेंगे?

काला धन ही सारे भ्रष्टाचार का माध्यम है। अवैध दलाली, रिश्वत, ब्लैकमेल का पैसा, आतंकवादी धन, तस्करी का पैसा आखिर कैसे लिया–दिया जाता है? टैक्स–चोरी से भी काला–धन पैदा होता है लेकिन वह उतना काला नहीं होता, जितना कि ऊपर बताए तरीकों से होता है। आम लोगों में यह भावना भी घर कर गई है कि हम अपने खून–पसीने की कमाई टैक्स पर क्यों लुटाएं? हमारे टैक्स को तो नेता डकार जाते हैं। लाखों रूपए रोज हर नेता के रख–रखाव, वेतन–भत्ते, सुरक्षा और यात्राओं पर खर्च होते हैं और 80 करोड़ लोग सिर्फ 35 रूपए रोज पर गुजारा करते हैं। यह धारणा अभी व्यक्तिगत स्तर पर है। इसलिए लोग टैक्स–चोरी करते हैं लेकिन यही धारणा यदि सामूहिक स्तर पर फैल गई तो क्या होगा?

यदि देश के लोगों ने सिविल नाफरमानी या सविनय अवज्ञा शुरू कर दी तो क्या होगा? यदि सारे देश के लोग कह दें कि हम तुम्हें टैक्स नहीं देंगे!! तुम पहले विदेशों में जमा काले धन को वापस लाओ और उससे अपना खर्च चलाओ तो यह सरकार क्या कर लेगी? एक अंतरराष्ट्रीय अनुमान के अनुसार विदेशों में जमा भारतीय काला धन इतना ज्यादा है कि भारत सरकार का दस साल का खर्च सिर्फ उसी से चल सकता है। इसके पहले कि देश में सिविल नाफरमानी या सविनय अवज्ञा का प्रचंड वातावरण तैयार हो जाए, सरकार से आशा की जाती है कि वह काले धन के मूल पर प्रहार करेगी। सिर्फ श्वेत–पत्र जारी नहीं करेगी। ❑

विश्व अर्थव्यवस्था को सुदिशा दीजिये

सच यह है कि वर्तमान अर्थव्यवस्था असंतुलित है। विकसित देशों के 25 प्रतिशत लोग विश्व के 75 प्रतिशत संसाधनों की खपत कर रहे हैं। जरूरत इस असंतुलन को तोड़ने की है। बीमार व्यक्ति को पेन किलर देकर संतुलन बनाये रखने से रोग बढ़ता है। सर्जरी करने पर ही रोग ठीक होता है। इसी प्रकार वर्तमान असंतुलित विश्व अर्थव्यवस्था में संतुलन बनाये रखने से यह असंतुलन बढ़ेगा। टेढ़ी लकड़ी को सीधा करने के लिये उसे दूसरी तरफ मोड़ना पड़ता है।

■ डॉ. भरतझुनझुनवाला

अमरीका में कुछ ही महीनों में चुनाव होने वाले हैं। दोनों प्रमुख प्रत्याशी – सत्तारूढ़ राष्ट्रपति ओबामा एवं चुनौती देने वाले मिट रामनी के पास अमरीका के बढ़ते ऋण से निपटने के लिये कोई भी रणनीति नहीं है। चुनाव इस मुद्दे पर होने जा रहा है कि बेरोजगारी भत्ता देने में अर्थव्यवस्था टूटेगी अथवा युद्ध करने में अर्थव्यवस्था टूटेगी।

विश्व अर्थव्यवस्था इस समय नाजुक दौर से गुजर रही है। यूरोप का संकट गहराता जा रहा है। जर्मनी द्वारा दूसरे देशों पर सरकारी कल्याणकारी खर्चों में कटौती की पालिसी को थोपा जा रहा है जिसका सर्वत्र विरोध हो रहा है।

इस मुद्दे पर टकराव के कारण ग्रीस में नई सरकार का गठन नहीं हो पा रहा है। अमरीका में कुछ ही महीनों में चुनाव होने वाले हैं। दोनों प्रमुख प्रत्याशी – सत्तारूढ़ राष्ट्रपति ओबामा एवं चुनौती देने वाले मिट रामनी के पास अमरीका के बढ़ते ऋण से निपटने के लिये कोई भी रणनीति नहीं है।

चुनाव इस मुद्दे पर होने जा रहा है कि बेरोजगारी भत्ता देने में अर्थव्यवस्था टूटेगी अथवा युद्ध करने में अर्थव्यवस्था टूटेगी। विकसित देशों की समस्या का कुछ दुष्प्रभाव भारत और चीन पर भी पड़ रहा है। दोनों की विकास दर दबाव में है। ऐसी संवेदनशील परिस्थिति में भारत को अपनी वैश्विक नीति निर्धारित करना है।

दो माह पूर्व दिल्ली में पांच उभरती अर्थव्यवस्थाओं का शिखर सम्मेलन हुआ था। इस सम्मेलन में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहाः ''हमें टिकाऊ और संतुलित वैश्विक विकास को बढ़ाना चाहिये। हमें मिलकर यूरोप को मदद करनी चाहिये जिससे वैश्विक विकास बढ़ सके।''

मनमोहन सिंह संतुलन की मांग कर रहे हैं जैसे गुण्डे और साधु के बीच संतुलन की मांग की जाये।

सच यह है कि वर्तमान अर्थव्यवस्था असंतुलित है। विकसित देशों के 25 प्रतिशत लोग विश्व के 75 प्रतिशत संसाधनों की खपत कर रहे हैं। जरूरत इस असंतुलन को तोड़ने की है।

बीमार व्यक्ति को पेन किलर देकर संतुलन बनाये रखने से रोग बढ़ता है। सर्जरी करने पर ही रोग ठीक होता है। इसी प्रकार वर्तमान असंतुलित विश्व अर्थव्यवस्था में संतुलन बनाये रखने से यह असंतुलन बढ़ेगा। टेढ़ी लकड़ी को सीधा करने के लिये उसे दूसरी तरफ मोड़ना पड़ता है।

इसी तरह असंतुलन को तोड़ने के लिये विकासशील देशों के पक्ष में नया असंतुलन बनाना होगा। विश्व अर्थव्यवस्था की वर्तमान विसंगति को ठीक करने के लिये कुछ समय के लिये अस्थिरता जरूरी है। जैसे बंधुआ मजदूर पर से जमींदार का संरक्षण हटा लिया जाये तो कुछ समय के लिये वह अस्थिर हो जाता है। उसे स्वयं रोजगार ढूंढ़ना होता है इत्यादि। इस असंतुलन का स्वागत करना चाहिये।

मनमोहन सिंह ने विश्व व्यापार संगठन की दोहा चक्र की वार्ता को आगे बढ़ाने की वकालत की है। इस वार्ता में विकसित देशों की मांग है कि उनके माल को कम कस्टम ड्यूटी पर विकासशील देश में प्रवेश दिया जाये। विश्व व्यापार की मूल विसंगतियों पर चर्चा नहीं हो रही है। पहली विसंगति पेमेंट कानून की है। इस कानून के कारण विकसित देश भारी कमाई कर रहे हैं। दूसरी विसंगति श्रमिकों के आवागमन पर रोक की है।

मनमोहन सिंह को मांग करनी चाहिये कि दोहा चक्र को निरस्त करके नये चक्र को शुरू किया जाये जिसमें प्रमुख बिन्दु पेटेंट और श्रमिकों का आवागमन हो।

मनमोहन सिंह ने सम्मेलन को सम्बोधित करते हुये कहा कि ''विकासशील देशों को पूंजी चाहिये विशेषकर बुनियादी सेवाओं में निवेश के लिये। ब्रिक्स देशों के लिये हितकारी है कि माल तथा पूंजी के आवागमन में अवरोधों को हटायें।''

मनमोहन सिंह आज भी विदेशी पूंजी के पीछे पड़े हैं। समस्या है कि आज विकासशील देश पूंजी निर्यातक बन चुके हैं। जितनी पूंजी हम विदेशी निवेश के रूप में मिल रही है उससे ज्यादा पूंजी हमारे द्वारा दूसरे देशों में विदेशी निवेश तथा विदेशी मुद्रा भंडार बनाने के लिये बाहर भेजी जा रही है। इंग्लैण्ड और अमरीका हमारी पूंजी पर आश्रित हैं।

अपने व्यापार घाटे की पूर्ति के लिये अमरीका द्वारा चीन आदि विकासशील देशों से भारी ऋण लिया जा रहा है। यदि मनमोहन सिंह को पूंजी का अभाव दिखता है तो उन्हे विकासशील देशों से हो रहे पूंजी के पलायन को रोकने की बात उठानी चाहिये।

जहां तक बुनियादी संरचना में निवेश की बात है घरेलू नौकरशाही के आतंक एवं राजनैतिक भ्रष्टाचार पर रोक लगाना चाहिये। घरेलू कुशासन को बनाये रखते हुये विदेशी पूंजी को न्योता देने का अर्थ होगा इस कुशासन को बढ़ावा देना।

दुनिया बदल चुकी है विकसित देशों का जहाज डूब रहा है। अपनी नाव को उनके जहाज से बांध कर अपनी नाव अनायास ही नहीं डुबानी चाहिये। मनमोहन सिंह के इस दब्बू और घातक रवैये के बावजूद ब्रिक्स सम्मेलन में कुछ सकारात्मक निर्णय लिये गये।

तय किया गया कि पांचों देशों के केन्द्रीय बैंक दूसरे सदस्य देशों की मुद्रा में सीधे लेन देन करेंगे। वर्तमान में इनके बीच

यदि मनमोहन सिंह को पूंजी का अभाव दिखता है तो उन्हे विकासशील देशों से हो रहे पूंजी के पलायन को रोकने की बात उठानी चाहिये। जहां तक बुनियादी संरचना में निवेश की बात है घरेलू नौकरशाही के आतंक एवं राजनैतिक भ्रष्टाचार पर रोक लगाना चाहिये। घरेलू कुशासन को बनाये रखते हुये विदेशी पूंजी को न्योता देने का अर्थ होगा इस कुशासन को बढ़ावा देना। दुनिया बदल चुकी है विकसित देशों का जहाज डूब रहा है। अपनी नाव को उनके जहाज से बांध कर अपनी नाव अनायास ही नहीं डुबानी चाहिये। मनमोहन सिंह के इस दब्बू और घातक रवैये के बावजूद ब्रिक्स सम्मेलन में कुछ सकारात्मक निर्णय लिये गये।

व्यापार डालर अथवा यूरो के माध्यम ये किया जाता है। मसलन भारत को ब्राजील को पेमेन्ट करना हो तो पहले रुपये बेचकर डालर खरीदे जाते हैं; उसके बाद डालर बेचकर ब्राजीली रियाल खरीदे जाते हैं। इस प्रक्रिया में दो बार मुद्रा परिवर्तन का कमीशन लगता है और इन देशों को अनायास ही भारी मात्रा में अपने खाते में डालर खरीदना पड़ता है। यह दो बार का लेन देन मुख्यतः लंदन या न्यूयार्क में किया जाता है।

यही कारण है कि इन शहरों को विश्व की आर्थिक राजधानी का दर्जा मिला हुआ है। अब ब्रिक्स देशों के केन्द्रीय बैंक सीधे दूसरे देशों की मुद्रा में खरीद बेच करेंगे। यह सीधा लेन–देन वैकल्पिक विश्व मुद्रा स्थापित कर सकता है। ब्रिक्स देशों के नेताओं को इस निर्णय के लिये साधुवाद।

दूसरा निर्णय लिया गया कि विश्व बैंक की तर्ज पर ये देश अपना बैंक बनायेंगे। ज्ञात हो कि विश्व बैंक के शेयर की अधिकतर हिस्सेदारी अमरीका और इंग्लैण्ड जैसे विकसित देशों के पास है जबकि ऋण विकासशील देशों को दिये जाते हैं।

जाहिर है कि विश्व बैंक उन नीतियों को बढ़ायेगा जिनसे विकसित देशों के हित सिद्ध हों। दुकानदार वही माल बेचता है जिसमें मार्जिन अधिक मिलता है। दुकानदार का कथित उद्देश्य ग्राहक को सस्ता माल उपलब्ध कराना होता है परन्तु मूल उद्देश्य लाभ कमाना होता है। इसी प्रकार विश्व बैंक का कथित उद्देश्य विकासशील देशों में गरीबी उन्मूलन है जबकि मूल उद्देश्य विकसित देशों की कम्पनियों को विकासशील देशों में प्रवेश कराकर उनके संसाधनों को चूसना है। अतः अपना बैंक बनाना सही दिशा में एक कदम है। ब्रिक्स देशों के इस मन्तव्य पर विकसित देश चिढ़ रहे हैं।

विश्व बैंक के अमरीकी अध्यक्ष राबर्ट जोलिक ने कहा कि ''इस बैंक को स्थापित करना कठिन होगा। ब्रिक्स देशों के लिये विश्व बैंक की क्षमता की बराबरी करना कठिन होगा।'' न्यूयार्क टाइम्स ने भी इस मन्तव्य की भर्त्सना की है। इन विरोधों के बावजूद ब्रिक्स देशों को इस दिशा में बढ़ना चाहिये।

दुकानदार वही माल बेचता है जिसमें मार्जिन अधिक मिलता है। दुकानदार का कथित उद्देश्य ग्राहक को सस्ता माल उपलब्ध कराना होता है परन्तु मूल उद्देश्य लाभ कमाना होता है। इसी प्रकार विश्व बैंक का कथित उद्देश्य विकासशील देशों में गरीबी उन्मूलन है जबकि मूल उद्देश्य विकसित देशों की कम्पनियों को विकासशील देशों में प्रवेश कराकर उनके संसाधनों को चूसना है।

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने सम्मेलन को दिये गये अपने वक्तव्य में कहा कि उद्यमियों के बीच आपसी मेलजोल को बढ़ाना चाहिये। यह कदम भी सही दिशा में है। आज के दिन पश्चिमी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के पास पूंजी, तकनीक तथा प्रबन्धन की बेजोड़ क्षमता उपलब्ध है जिसके सामने विकासशील देशों की कम्पनियों को टिकने में कठिनाई हो रही है।

ब्रिक्स देशों के उद्यमी यदि एक साथ हो जायें तो पश्चिमी कम्पनियों का सामना करना आसान हो जायेगा। जैसे भारत की प्रबंधन क्षमता, ब्राजील की तकनीक और चीन की पूंजी के सामने पश्चिमी देशों का खड़ा रहना मुश्किल हो जायेगा।

आज अर्थव्यवस्था दोराहे पर खड़ी है। विकसित देश दबाव में हैं। इस परिस्थिति का लाभ उठाते हुये विकासशील देशों को एकजुट होकर विश्व अर्थव्यवस्था की सर्जरी करके मौलिक असमानता को दूर करना चाहिये। ❑

मंदी का साया और रुपए के साथ साजिश!

ग्रीस, पुर्तगाल और आयरलैंड के बाद अब स्पेन की अर्थव्यवस्था लड़खड़ा रही है। पिछले 150 साल में करीब 18 बड़े आर्थिक संकट (इनमें सबसे ज्यादा बैंकिंग संकट) देखने वाला स्पेन आर्थिक मुसीबतों का अजायबघर बन गया है। स्पेन सरकार पर बोझ बने इन शहरों के पास खर्चा चलाने तक का पैसा नहीं है। नए हवाई अड्डे व शापिंग कॉम्पलेक्स और बीस लाख से ज्यादा मकान खाली पड़े हैं। यूरोपीय केंद्रीय बैंक से स्पेन बैंकों को जो मदद मिली थी, वह भी गले में फंस गई है। भारतीय अर्थव्यवस्था के संकट के कई कारण हैं। सिर्फ व्यापार घाटा ही नहीं, बल्कि विदेशी कर्ज भी तेजी से बढ़ा है . . .ऐसा नहीं है कि इस संकट से बचा नहीं जा सकता। वास्तव में यह गड़बड़ी अनिर्णय, भ्रष्टाचार और राजनीतिक मजबूरियों तथा विकल्पों के चुनाव के कारण पैदा हुई है। अब सरकार फंस गई है।

■ निरंकार सिंह

देश में एक बार फिर मंदी की आहट है। औद्योगिक उत्पादन की रफ्तार में गिरावट आई है और निर्यात कम हो रहा है। रुपया डॉलर के मुकाबले रुपया लगातार कमजोर हो रहा है। खुद वित्तमंत्री प्रणब मुखर्जी ने स्वीकार किया है कि औद्योगिक वृद्धि दर के आंकड़ें निराशाजनक हैं। पश्चिमी देशों में मंदी और घरेलू अर्थव्यवस्था में नरमी इसके लिए जिम्मेदार है। लेकिन घरेलू अर्थव्यवस्था में नरमी को दूर करने के लिए सरकार ने समय रहते हुए कदम क्यों नहीं उठाए?

यूरोपीय देश जब मंदी की गिरफ्त में आ रहे हैं तो हमें पहले ही घरेलू मोर्चे पर मुस्तैदी दिखानी चाहिए थी, लेकिन हम नींद से जागते ही तब हैं जब संकट हमारे सिर पर आ जाता है। बीते वित्त वर्ष में यह दूसरा मौका है, जब औद्योगिक उत्पादन में तेज गिरावट आई है। इससे पहले अक्टूबर, 2011 में इस क्षेत्र का उत्पादन 5.1 प्रतिशत लुढ़का था। उसके बाद उत्पादन में सुधार तो हुआ, लेकिन रफ्तार में सुस्ती बनी रही।

महंगाई और ऊंची ब्याज दरों ने बीते वित्त वर्ष की सालाना औद्योगिक विकास दर को भी प्रभावित किया। इसके चलते यह वर्ष 2010–11 के 8.2 प्रतिशत के मुकाबले 2.8 फीसदी सिमट गया।

निर्यात के मोर्चे पर भी तस्वीर निराशाजनक है। सरकार मान चुकी है कि वर्ष 2012–13 निर्यात के लिए खराब रहने वाला है। रुपया भी रिजर्व बैंक की कोशिशों के बावजूद संभाले नहीं संभल रहा है। तेजी से बढ़ रहा आयात रुपये पर और दबाव बनाएगा।

वित्त वर्ष 2012–13 की शुरुआत से ही विदेश व्यापार के मोर्चे पर घाटा डराने लगा है। निर्यात के मुकाबले अधिक आयात के चलते वित्त वर्ष के पहले ही महीने में व्यापार घाटा 13 अरब डॉलर को पार कर गया है। आयात में बढ़ोतरी रुपये

यूरोपीय देश जब मंदी की गिरफ्त में आ रहे हैं तो हमें पहले ही घरेलू मोर्चे पर मुस्तैदी दिखानी चाहिए थी, लेकिन हम नींद से जागते ही तब हैं जब संकट हमारे सिर पर आ जाता है। बीते वित्त वर्ष में यह दूसरा मौका है, जब औद्योगिक उत्पादन में तेज गिरावट आई है। इससे पहले अक्टूबर, 2011 में इस क्षेत्र का उत्पादन 5.1 प्रतिशत लुढ़का था। उसके बाद उत्पादन में सुधार तो हुआ, लेकिन रफ्तार में सुस्ती बनी रही।

37 सालों में पहली बार ब्रिटेन के विकास में लगातार गिरावट देखी गई है। स्पेन, यूरोजोन का नया संकट है। यूरोप की विकास दर नीचे जा रही है। अमेरिका में भी विकास की गति ठप है। दुनिया एक मंदी से निकल नहीं सकी और दूसरी मंदी की आहट सुनाई दे रही है।

की कीमत पर भी दबाव बना रही है।

अप्रैल, 2012 में निर्यात की वृद्धि दर मात्र 3.2 प्रतिशत पर सिमट गई। बीते माह 24.5 अरब डॉलर का निर्यात हुआ। इसके मुकाबले आयात बढ़कर करीब 38 अरब डॉलर पर पहुंच गया। आयात के भुगतान के लिए डॉलर की मांग बढ़ेगी। आयात वृद्धि से व्यापार घाटा भी बढ़ेगा। अप्रैल में व्यापार घाटा 13.4 अरब डॉलर रहा।

आयात में तेज वृद्धि रुपये की कीमत को और कमजोर कर सकती है। अमेरिका के बाद अब यूरोपीय देशों की अर्थव्यवस्था का मंदी की चपेट में आना भारत और चीन के लिए खतरे की घंटी है।

37 सालों में पहली बार ब्रिटेन के विकास में लगातार गिरावट देखी गई है। स्पेन, यूरोजोन का नया संकट है। यूरोप की विकास दर नीचे जा रही है। अमेरिका में भी विकास की गति ठप है। दुनिया एक मंदी से निकल नहीं सकी और दूसरी मंदी की आहट सुनाई दे रही है।

ग्रीस, पुर्तगाल और आयरलैंड के बाद अब स्पेन की अर्थव्यवस्था लड़खड़ा रही है। पिछले 150 साल में करीब 18 बड़े आर्थिक संकट (इनमें सबसे ज्यादा बैकिंग संकट) देखने वाला स्पेन आर्थिक मुसीबतों का अजायबघर बन गया है।

स्पेन सरकार पर बोझ बने इन शहरों के पास खर्चा चलाने तक का पैसा नहीं है। नए हवाई अड्डे व शापिंग कॉम्पलेक्स और बीस लाख से ज्यादा मकान खाली पड़े हैं। यूरोपीय केंद्रीय बैंक से स्पेन बैंकों को जो मदद मिली थी, वह भी गले में फंस गई है। भारतीय अर्थव्यवस्था के संकट के कई कारण हैं। सिर्फ व्यापार घाटा ही नहीं, बल्कि विदेशी कर्ज भी तेजी से बढ़ा है।

मार्च, 2011 में विदेशी कर्ज और विदेशी मुद्रा भंडार का संतुलन ठीक था। लेकिन दिसंबर में 88 फीसदी कर्ज चुकाने लायक विदेशी मुद्रा ही हमारे पास बची। विदेशी कर्ज में छोटी अवधि का कर्ज 2008 के बाद सबसे ऊंचे स्तर पर है। सबसे बड़ा खतरा यह है कि 43 फीसदी विदेशी कर्ज अगले एक साल में देनदारी के लिए आने वाला है। विदेशी मुद्रा भंडार इस समय दो माह के निचले स्तर (293 अरब डॉलर) पर है, जो एक साल के आयात की लागत से कम है।

मार्च, 2011 में विदेशी कर्ज और विदेशी मुद्रा भंडार का संतुलन ठीक था। लेकिन दिसंबर में 88 फीसदी कर्ज चुकाने लायक विदेशी मुद्रा ही हमारे पास बची। विदेशी कर्ज में छोटी अवधि का कर्ज 2008 के बाद सबसे ऊंचे स्तर पर है।

सबसे बड़ा खतरा यह है कि 43 फीसदी विदेशी कर्ज अगले एक साल में देनदारी के लिए आने वाला है। विदेशी मुद्रा भंडार इस समय दो माह के निचले स्तर (293 अरब डॉलर) पर है, जो एक साल के आयात की लागत से कम है। यानी अगर विदेशी पूंजी का प्रवाह नहीं बढ़ा, तो देश का विदेशी मुद्रा भंडार अगले एक साल में खत्म हो जाएगा।

भारतीय रुपए के साथ साजिश!

डॉलर के मुकाबले में रुपये की ऐतिहासिक गिरावट ने भारतीय अर्थव्यवस्था की पोल खोल दी है। सरकार लगातार कह रही है कि वह चिंतित है, लेकिन उसकी

चिंता अभी तक उसके किसी भी निर्णय में दिखाई नहीं देती है। यह सवाल सरकार से पूछा जा रहा है कि अन्य एशियाई देशों के मुकाबले भारतीय मुद्रा ही डॉलर के मुकाबले क्यों गिर रही है और रुपये की इस गिरावट को रोकने के लिए ठोस कदम क्यों नहीं उठाए जा रहे हैं।

लेकिन इस ऐतिहासिक गिरावट के बावजूद भारतीय रिजर्व बैंक की ओर से बाजार में किसी तरह के हस्तक्षेप का कोई संकेत नहीं मिला। चालू वर्ष में मार्च के बाद से रुपया डॉलर की तुलना में 11 प्रतिशत से अधिक कमजोर हो चुका है और इसके कारण कच्चे तेल तथा अन्य आयातित वस्तुओं के दाम लगातार बढ़ रहे हैं। भारतीय रिजर्व बैंक फिलहाल किंकर्तव्यविमूढ़ की स्थिति में है। वह न तो इस गिरावट का समर्थन कर सकता है और न ही बचाव।

बचाव के लिए अपने मौद्रिक स्रोतों को खोलना होगा। डॉलर से खरीदे जाने वाले पदार्थों तथा कच्चा तेल, मेवे और कतिपय जिंसों की जरूरतों को नियंत्रित करना होगा। देश का विदेशी मुद्रा कोष बरकरार रहे और हमारी मुद्रा का सम्मान बना रहे, इसके लिए जरूरी है कि सरकार पहल करे और भारतीय रिजर्व बैंक भी खुले हाथ और खुले दिमाग से निर्णय लेकर भारतीय बाजार को बचाए। अमेरिकी डॉलर के मुकाबले रुपये में भारी गिरावट से देश के आर्थिक क्षेत्र में उथल–पुथल मची हुई है।

विपक्ष इस गिरावट के लिए सरकार की नीतियों को जिम्मेदार बता रहा है तो सरकार यूरो क्षेत्र में पैदा हुए असंतुलन को इसका कारण बता रही है। भाजपा नेता मुरली मनोहर जोशी ने रुपये में भारी गिरावट को संप्रग सरकार की साजिश बताया है। इस गिरावट की आड़ लेकर सरकार बैकिंग, बीमा और खुदरा व्यापार के क्षेत्र में कारोबार करने वाली कंपनियों के मालिकाना हक को लेकर लगे प्रतिबंधों को खत्म करना चाहती है।

पिछले एक साल में रुपये की कीमत में 20 फीसदी से अधिक गिरावट आई है। एक डॉलर की कीमत 56 रुपये तक पहुंच गई है। यह गिरावट इतनी ज्यादा है कि आर्थिक महाशक्तियों की कतार में शामिल होने की भारत की उम्मीदों पर पानी फिरने का खतरा पैदा हो गया है। निश्चित रूप से इसकी एक वजह यूरोप में निरंतर चल रहा आर्थिक संकट भी है। इसके बावजूद अपनी तमाम समस्याओं के लिए अंतरराष्ट्रीय कारणों को दोष देना गलत होगा।

वस्तुतः यह स्थिति एक दिन या एक महीने में पैदा नहीं हुई। इस संकट की जड़ें काफी पुरानी हो चुकी हैं। देश की संप्रग सरकार का नेतृत्व भले ही अर्थशास्त्री के रूप में विख्यात मनमोहन सिंह कर रहे हों, लेकिन केंद्र सरकार एक ऐसी अर्थ नीति पर चल रही है, जिसमें वित्तीय प्रबंधकों ने स्वतः यह मान लिया कि विदेशी निवेशक भारत में लगातार निवेश करते रहेंगे यानी पूंजी निवेश करते समय वे इस बात का ख्याल नहीं रखेंगे कि देश की मुख्य आर्थिक समस्याएं क्या हैं।

ग्लोबल अर्थव्यवस्था में मंदी की आहट ने निवेशकों को सुरक्षित पनाहगाह तलाशने पर मजबूर कर दिया है। नतीजतन निवेशकों ने एशिया समेत सभी बाजारों से अपना निवेश निकालना शुरू कर दिया है।

डॉलर के मुकाबले में रुपये की ऐतिहासिक गिरावट ने भारतीय अर्थव्यवस्था की पोल खोल दी है। सरकार लगातार कह रही है कि वह चिंतित है, लेकिन उसकी चिंता अभी तक उसके किसी भी निर्णय में दिखाई नहीं देती है। यह सवाल सरकार से पूछा जा रहा है कि अन्य एशियाई देशों के मुकाबले भारतीय मुद्रा ही डॉलर के मुकाबले क्यों गिर रही है और रुपये की इस गिरावट को रोकने के लिए ठोस कदम क्यों नहीं उठाए जा रहे हैं।

इंडिया फारेक्स एडवाइजर्स का मानना है कि सभी विदेशी मुद्राओं के मुकाबले डॉलर की बढ़ती कीमत रुपये को और कमजोर बना सकती है। आयात में वृद्धि की रफ्तार इसी तरह जारी रही तो डॉलर के मुकाबले रुपये की कीमत और नीचे जा सकती है। निर्यात के मुकाबले आयात का तेजी से बढ़ना सरकार की गलत नीतियों का ही नतीजा है, क्योंकि देश को उपभोक्ता बनाने से पहले उत्पादक बनाना चाहिए।

रुपये की कीमत पर भी इसका असर पड़ा है। वैसे, रिजर्व बैंक के डिप्टी गवर्नर सुबीर गोकर्ण ने कहा कि केंद्रीय बैंक रुपये की गिरती कीमत को रोकने की कोशिशें करता रहेगा। ऐसा करने में रिजर्व बैंक के लिए भी दिक्कतें बढ़ती जा रही हैं। रुपये की कीमत को संभालने के फेर में देश का विदेशी मुद्रा भंडार घटकर 291.80 अरब डॉलर तक आ गया है।

बढ़ते आयात के मद्देनजर सरकार के लिए यह स्थिति बेहद चिंताजनक हो गई है। यह माना जा रहा है कि रिजर्व बैंक तेल कंपनियों की डॉलर मांग को पूरा करने के लिए सीधी खिड़की खोल सकता है। अभी आयातक अलग–अलग बैंकों के जरिये डॉलर खरीदते हैं, जिसके चलते सट्टेबाजी को बढ़ावा मिलता है। इसलिए संभव है कि रिजर्व बैंक इन कंपनियों की डॉलर मांग को खुद ही पूरा करेगा।

जानकारों का मानना है कि जब तक यूरो संकट का हल नहीं निकलता वित्तीय बाजारों में उठापटक जारी रहेगी। रुपये की तेजी से गिरती कीमत सरकार के आर्थिक संकट को और बढ़ा रही है।

व्यापार घाटे में वृद्धि से देश का चालू खाते का घाटा बढ़ने की आशंका में रुपये की कीमत तेजी से घट रही है।

पिछले साल अगस्त से रुपये की घटती कीमत अर्थव्यवस्था के लिए मुश्किल बनती जा रही है। इसकी वजह से भुगतान संतुलन बुरी तरह प्रभावित हुआ है।

बीते वित्त वर्ष 2011–12 में निर्यात के मुकाबले आयात अधिक रहने से व्यापार घाटा 180 अरब डॉलर पर पहुंच गया। इसके चलते रिजर्व बैंक के विदेशी मुद्रा भंडार पर भी दबाव पड़ रहा है। आरबीआई के पास अब चार महीने के आयात का विदेशी मुद्रा रिजर्व है। विदेशी मुद्रा भंडार में कमी की वजह से केंद्रीय बैंक के पास रुपये की गिरती कीमत को थामने के विकल्प भी सीमित होते जा रहे हैं।

आरबीआई विदेशी विनिमय बाजार में लगातार दखल देने की हालत में नहीं है। घरेलू अर्थव्यवस्था की मौजूदा आर्थिक स्थिति और ग्लोबल हालात डॉलर के मुकाबले रुपये पर लगातार दबाव बनाए हुए हैं।

बीते कुछ समय में रुपये की यात्रा पर नजर डालें तो 2008 में पैदा हुए आर्थिक और वित्तीय संकट के समय भी हम ऐसी ही स्थिति में रूबरू हो चुके हैं। अंतर मात्र इतना है कि उस समय रुपये की गिरावट अंतरराष्ट्रीय कारणों से हुई थी, जबकि इस समय इसकी वजह घरेलू कारण है।

इंडिया फारेक्स एडवाइजर्स का मानना है कि सभी विदेशी मुद्राओं के मुकाबले डॉलर की बढ़ती कीमत रुपये को और कमजोर बना सकती है। आयात में वृद्धि की रफ्तार इसी तरह जारी रही तो डॉलर के मुकाबले रुपये की कीमत और नीचे जा सकती है। निर्यात के मुकाबले आयात का तेजी से बढ़ना सरकार की गलत नीतियों का ही नतीजा है, क्योंकि देश को उपभोक्ता बनाने से पहले उत्पादक बनाना चाहिए।

बीते कुछ समय में रुपये की यात्रा पर नजर डालें तो 2008 में पैदा हुए आर्थिक और वित्तीय संकट के समय भी हम ऐसी ही स्थिति में रूबरू हो चुके हैं। अंतर मात्र इतना है कि उस समय रुपये की गिरावट अंतरराष्ट्रीय कारणों से हुई थी, जबकि इस समय इसकी वजह घरेलू कारण है।

अभी कुछ ही सप्ताह पहले स्टैंडर्ड एंड पुअर एजेंसी ने भारत की रेटिंग को स्टैबल से नेगेटिव कर दिया था। इस साल के शुरू में अर्थव्यवस्था के सुधार के उपायों के रूप में रिजर्व बैंक ने जो कदम उठाए थे, दुर्भाग्य से उनके सकारात्मक नतीजे अधिक समय तक टिक नहीं पाए।

लिहाजा, उस समय विदेशी निवेश में हुई भारी बढ़ोतरी की धारा थोड़े दिन बाद ही सूखने लगी और अब यह पूरी तरह लुप्त हो गई है। आज विदेशी पूंजी की सबसे बड़ी चिंता यह है कि चालू वित्तीय वर्ष में भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में घाटे की व्यवस्था में 4.3 प्रतिशत की रिकॉर्ड गिरावट होने वाली है और यह संकट तमाम उपायों के बावजूद 2013 में भी बना रहेगा।

ऐसा नहीं है कि इस संकट से बचा नहीं जा सकता। वास्तव में यह गड़बड़ी अनिर्णय, भ्रष्टाचार और राजनीतिक मजबूरियों तथा विकल्पों के चुनाव के कारण पैदा हुई है। अब सरकार फंस गई है। ❑

आर्थिक अक्षमता का एक और साक्ष्य

घाटे का रोना कहा जा रहा है कि जून 2010 से हमने पेट्रोल मूल्य को बाजार के हवाले छोड़ दिया है और वहां के उतार–चढ़ाव के अनुसार ही इसका मूल्य निर्धारित हुआ है। अमेरिका के मूल्य तो पहले ही से बाजार द्वारा निर्धारित होते हैं। वहां ऐसा क्यों नहीं है? इसका यथोचित उत्तर न हमारी सरकार देती है और न तेल कंपनियां ही। बेशक, अंतरराष्ट्रीय बाजार में मूल्य वृद्धि हुई, लेकिन यह तो अमेरिका के लिए भी है। वहां तो इतनी मूल्यवृद्धि नहीं होती। वैसे भी इस समय अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल के मूल्यों में भारी उछाल नहीं है।

■ अवधेश कुमार

पेट्रोल की कीमतों में एक साथ इतनी बड़ी वृद्धि के बाद आम आकलन यह था कि सरकार अंततः हस्तक्षेप करके तेल कंपनियों को मूल्य में थोड़ी कमी लाने के लिए बाध्य करेगी, लेकिन तत्काल पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्री जयपाल रेड्डी ने हाथ खड़े कर दिए हैं और तेल कंपनियों ने तो पहले ही बयान दे दिया था कि इस समय मूल्य घटाना उनके लिए संभव नहीं है। उनके अनुसार इससे कंपनियों का कचूमर निकल जाएगा। तो विपक्षी दल या संप्रग के कुछ साथी दल चाहे जितना चिल्ल पों करें, पेट्रोल का उपयोग करने वालों के पास भारत के इतिहास की सबसे ज्यादा कीमत देने के अलावा कोई चारा नहीं है, लेकिन क्या वाकई मूल्य वृद्धि और वह भी एक साथ इतनी ज्यादा अपरिहार्य थी?

ध्यान रखिए, यह पिछले दस सालों में एकमुश्त सबसे ज्यादा वृद्धि है। तो तर्क यह है कि दिसंबर में हमने मूल्य गिरने के बाद 62 पैसे प्रति लीटर की कमी की थी, तब से परिवर्तन हुआ ही नहीं। तेल कंपनियों का कहना है कि उस समय से तेल के मूल्य बढ़े हैं और हमारे रुपये का मूल्य डॉलर की तुलना में गिरा है। तेल कंपनियां कह रही हैं कि उन्हें प्रतिदिन 512 करोड़ रुपये का नुकसान हो रहा है।

जयपाल रेड्डी का कहना है कि अगर रुपये के मूल्य में एक रुपये की गिरावट होती है तो घाटा 8 हजार करोड़ का हो जाता है।

इन दोनों के कारण दिसंबर से तेल कंपनियों को 83 करोड़ डॉलर का घाटा हो चुका है। गत वर्ष का घाटा 1 लाख 38 हजार 541 करोड़ रुपये बताया जा रहा है। इस घाटे में 55,000 करोड़ रुपये तो तेल

सबसे पहले तो घाटा में आंकड़ों की जादूगरी का योगदान काफी है। अगर तेल कंपनियों को घाटा हो रहा है तो फिर उनके कर्मचारियों को मोटी तनख्वाह ही नहीं, भारी बोनस कहां से मिल रहा है? दूसरे, सच समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि दुनिया में पेट्रोल की सबसे ज्यादा कीमत भारत में ही है। 29 नवंबर 2011 को राज्यसभा में एक प्रश्न के उत्तर में पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस राज्यमंत्री आरपीएन सिंह ने कहा कि भारत में पेट्रोल अमेरिका से लेकर हमारे पड़ोसी देशों से भी महंगा है।

कंपनियों को पूरे करने थे और सरकार ने अपने खजाने से 83 हजार करोड़ रुपये दिए। इसके अनुसार यह राजकोषीय घाटे का प्रमुख कारण बना हुआ है।

राजकोषीय घाटे का अर्थ है सरकार आमदनी से ज्यादा खर्च करती है। सरकार पेट्रोल पर सब्सिडी नहीं देती है। जो नुकसान बताया जा रहा है वह डीजल, केरोसीन और रसोई गैस की बिक्री से है, जिस पर सरकार सब्सिडी देती है। जब मार्च में बजट पेश किया गया तो तेल सब्सिडी का अनुमान था 68 हजार 500 करोड़ रुपये। अंत में यह केवल 14 हजार 500 करोड़ रुपये ही हुआ।

जाहिर है, मूल्य वृद्धि और अंतरराष्ट्रीय बाजार में मूल्यों में कुछ कमी के फलस्वरूप ही संभव हुआ। किंतु इस वर्ष तेल कंपनियों को 1 लाख 93 हजार 880 करोड़ घाटे का अनुमान लगाया जा रहा है। अगर इस घाटे को सरकार और तेल कंपनियों के बीच बांटा जाए तो सरकार को 1 लाख 14 हजार करोड़ रुपये देने होंगे। शेष राशि की व्यवस्था तेल कंपनियां करेंगी। इस वर्ष के बजट में तेल सब्सिडी के मद में केवल 43 हजार 580 करोड़ रुपये रखे गए हैं।

अगर सरकार ने पिछले साल के अनुपात में सब्सिडी दिया तो उसे करीब 70 हजार करोड़ रुपये अनुमान से अतिरिक्त देने होंगे, जिससे देश का राजकोषीय घाटा बढ़ जाएगा। इस वर्ष 5 लाख 13 हजार 590 करोड़ रुपये के राजकोषीय घाटे का लक्ष्य वैसे ही भयभीत कर रहा है। इसमें वृद्धि अर्थव्यवस्था के लिए खतरनाक होगी। अधिक राजकोषीय घाटा का अर्थ है अधिक कर्ज। सरकार द्वारा अधिक कर्ज लेने का मतलब निजी कर्ज में कमी और उनके लिए ब्याज की वृद्धि। तो कुछ मिलाकर खजाने की हालत ठीक रखने और अर्थव्यवस्था संभालने के लिए मूल्य वृद्धि एकमात्र उपाय है। बेहिसाब टैक्स का बोझ लेकिन इस तथाकथित सच के पांच पहलू हैं।

सबसे पहले तो घाटा में आंकड़ों की जादूगरी का योगदान काफी है। अगर तेल कंपनियों को घाटा हो रहा है तो फिर उनके कर्मचारियों को मोटी तनख्वाह ही नहीं, भारी बोनस कहां से मिल रहा है? दूसरे, सच समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि दुनिया में पेट्रोल की सबसे ज्यादा कीमत भारत में ही है। 29 नवंबर 2011 को राज्यसभा में एक प्रश्न के उत्तर में पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस राज्यमंत्री आरपीएन सिंह ने कहा कि भारत में पेट्रोल अमेरिका से लेकर हमारे पड़ोसी देशों से भी महंगा है।

अमेरिका में पेट्रोल की दर 44.88 रुपये है। पड़ोसी देशों पाकिस्तान में 48.64 रुपये, श्रीलंका में 61.38 रुपये एवं बांग्लादेश में 52.42 रुपये है। नेपाल जहां आपूर्ति हमारे देश से होती है, वहां भी पेट्रोल 65.26 रुपये प्रति लीटर था, जो भारत में वृद्धि के साथ बढ़ा है। हां, यूरोप में यह महंगा अवश्य है। मसलन, ब्रिटेन में यह 104.60 रुपये है। यह प्रश्न आसानी से उठ सकता है कि आखिर अमेरिका आदि देशों में सस्ता और ब्रिटेन में महंगा क्यों है?

वस्तुतः सारा मामला करों का है। अमेरिका में प्रति लीटर केवल 5.32 रुपये कर है, जबकि ब्रिटेन में यह 62.47 रुपये है। साफ है कि अगर अमेरिका में कर बढ़ जाए तो पेट्रोल महंगा हो जाएगा और ब्रिटेन में घट जाए तो वहां सस्ता हो जाएगा। जरा भारत की ओर देखिए। दिल्ली में पेट्रोल पर उत्पाद एवं वैट को मिलाकर कुल कर 26.59 रुपये प्रति लीटर है। दिल्ली में पेट्रोल के दाम में करीब 45 प्रतिशत अंशदान करों का है।

तेलशोधक कारखाने का मूल्य 36.82 रुपये है, जिस पर 2.25 रुपये भाड़ा और विपणन एवं अन्य खर्च, जिनमें मार्जिन शामिल है आता है। इसके अलावा 14.79 रुपये प्रति लीटर उत्पाद शुल्क, 11.07 रुपये बिक्री कर दिल्ली सरकार लगाती है। इसके अलावा 1.50 रुपये पंप डीलर अपना

मान लीजिए, यदि घाटा ही है और बाजार के अनुसार ही मूल्यों में अंतर आना चाहिए तो फिर यह पहले ही होना चाहिए था। किंतु चुनाव तक तो मूल्य को छुआ ही नहीं गया। जाहिर है, कंपनियां राजनीतिक प्रतिष्ठान के इशारे की प्रतीक्षा करती हैं और इसके अनुसार ही कदम उठाती हैं। एक ओर देश का औद्योगिक उत्पादन गिर चुका है। अमेरिका और यूरोप की मंदी के बावजूद मजबूत होने की जगह रुपया कमजोर होकर रसातल में जा रहा है। खजाने का घाटा रिकॉर्ड बना रहा है, चालू खाते का 3.2 प्रतिशत घाटा 1990–91 की हालत बयां कर रहा है। विदेशी निवेशक अपना धन भारत में लगाने को तैयार नहीं और बाजार व्यवस्था का सबसे चहेता शेयर बाजार औंधे मुंह गिरा है। यह सब सरकार की नाकामी का परिणाम है।

कमीशन का लेते हैं। इस तरह दर बढ़ती है। इसकी चर्चा आरंभ में इसलिए की गई ताकि यह गलतफहमी दूर हो कि अंतरराष्ट्रीय बाजार में मूल्य वृद्धि सबसे बड़ी खलनायक नहीं है। यह इसका तीसरा पहलू है।

घाटे का रोना कहा जा रहा है कि जून 2010 से हमने पेट्रोल मूल्य को बाजार के हवाले छोड़ दिया है और वहां के उतार-चढ़ाव के अनुसार ही इसका मूल्य निर्धारित हुआ है। अमेरिका के मूल्य तो पहले ही से बाजार द्वारा निर्धारित होते हैं। वहां ऐसा क्यों नहीं है? इसका यथोचित उत्तर न हमारी सरकार देती है और न तेल कंपनियां ही। बेशक, अंतरराष्ट्रीय बाजार में मूल्य वृद्धि हुई, लेकिन यह तो अमेरिका के लिए भी है। वहां तो इतनी मूल्यवृद्धि नहीं होती। वैसे भी इस समय अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल के मूल्यों में भारी उछाल नहीं है।

मान लीजिए यह और नीचे आ गया तो? वस्तुतः 31 मार्च तक पेट्रोल का घाटा 4,860 करोड़ रुपये बताया गया है। इसे ध्यान में रखते हुए 6 रुपये 28 पेसे प्रति लीटर वृद्धि की गई है, लेकिन पेट्रोल के साथ तो न सब्सिडी का तर्क फिट बैठता है, न राजकोषीय घाटे का। यह इसका चौथा पहलू है।

मान लीजिए, यदि घाटा ही है और बाजार के अनुसार ही मूल्यों में अंतर आना चाहिए तो फिर यह पहले ही होना चाहिए था। किंतु चुनाव तक तो मूल्य को छुआ ही नहीं गया। जाहिर है, कंपनियां राजनीतिक प्रतिष्ठान के इशारे की प्रतीक्षा करती हैं और इसके अनुसार ही कदम उठाती हैं। यह इसका पांचवां और सबसे महत्वपूर्ण पहलू है।

एक ओर देश का औद्योगिक उत्पादन गिर चुका है। अमेरिका और यूरोप की मंदी के बावजूद मजबूत होने की जगह रुपया कमजोर होकर रसातल में जा रहा है। खजाने का घाटा रिकॉर्ड बना रहा है, चालू खाते का 3.2 प्रतिशत घाटा 1990-91 की हालत बयां कर रहा है। विदेशी निवेशक अपना धन भारत में लगाने को तैयार नहीं और बाजार व्यवस्था का सबसे चहेता शेयर बाजार औंधे मुंह गिरा है। यह सब सरकार की नाकामी का परिणाम है।

रुपया संभालने की जिम्मेवारी तो सरकार की ही है। उसे समझ ही नहीं आ रहा कि क्या करें। इसमें जनता के सिर बोझ बढ़ाना ही उसे विकल्प सूझता है, जबकि यह विकल्प है ही नहीं। राज्य चाहें तो कर घटाकर मूल्य काफी कम कर सकते हैं, लेकिन राज्यों की स्वयं माली हालत खस्ता है। इसलिए ज्यादातर राज्य ऐसा करने से डर रहे हैं और केंद्र भी यह समझते हुए ऐसा करने के लिए दबाव नहीं डाल रहा। तो तत्काल पेट्रोल एवं आने वाले समय में डीजल, केरोसीन एवं रसोई गैस की मूल्य वृद्धि को हमें संपूर्ण आर्थिक संकट एवं उससे निपटने में सरकार की अक्षमता के संदर्भ में ही देखना चाहिए और इस नाते यह ज्यादा भयभीत करने वाला है। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका सम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :-

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर-8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली-110022

चुनौतियां

वैश्विक चुनौतियों का अर्थशास्त्रा

क्या हम आशा करें कि सरकार अब आर्थिक सुधारों के मोर्चे पर गंभीर होकर खासतौर से इन्फ्रास्ट्रक्चर सब्सिडी, राजकोषीय घाटे और निवेश के मुद्दे पर नए सिरे से कदम उठाकर देश की आर्थिक तस्वीर को संवारेगी? निस्संदेह हमें इस समय सबसे अधिक कर्ज में डूबे अर्थव्यवस्था वाले यूरोजोन के देश ग्रीस के प्रधानमंत्री लुकास की यह बात याद रखनी होगी कि यदि ग्रीस में उपयुक्त रूप से लोकलुभावन योजनाओं को नियंत्रित किया जाता और घोटालों को रोका जाता तो आज ग्रीस को आर्थिक बदहाली का सामना नहीं करना पड़ता।

■ जयंतीलाल भंडारी

यकीनन इस समय भारत के आर्थिक परिदृश्य पर वैश्विक और आंतरिक कारणों से उपजी आर्थिक चुनौतियां उभर रही हैं। ये आर्थिक चुनौतियां वर्ष 2008 में अमेरिका के लीमैन ब्रदर्स से शुरू हुई वैश्विक मंदी की चुनौतियों से भी भयावह हैं।

वर्ष 2012 में भारतीय अर्थव्यवस्था को जहां ग्रीस से उठ रही वैश्विक सुस्ती का मुकाबला करना पड़ रहा है, वहीं आर्थिक सुधारों में पीछे रह जाने के कारण आंतरिक आर्थिक मुश्किलों का भी सामना करना पड़ रहा है। दुनिया की ख्यातिप्राप्त क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों ने भारत की क्रेडिट रेटिंग घटा दी है।

हाल ही में 21 मई को देश के प्रमुख औद्योगिक संगठन एसोचौम ने शोध अध्ययन आधारित अपनी रिपोर्ट में कहा है कि दुनियाभर में कई अर्थव्यवस्थाएं कर्ज संकट के चलते डूबने की कगार पर हैं। ऐसे में भारत को सावरेन वेल्थ फंड गठित करने जैसे विभिन्न प्रयासों से अपनी अर्थव्यवस्था को बचाने की जरूरत है। इससे घरेलू अर्थव्यवस्था को काफी मदद मिलेगी।

विश्व के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री और इनवेस्टमेंट बैंकर जिम ओ नील का कहना है कि ब्रिक्स देशों यानी ब्राजील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका में आर्थिक सुधारों के मोर्चे पर सबसे ज्यादा निराश भारत ने किया है। विकास के नीतिगत मोर्चो पर आर्थिक फैसले लेने में भारत ने तत्परता नहीं दिखाई है। अर्थ का अनर्थ होता गया निश्चित रूप से पिछले तीन साल के दौरान केंद्र की गठबंधन सरकार में आर्थिक सुधारों के सवाल पर एक ठहराव देखने को मिला है।

दूसरे दौर के आर्थिक सुधारों को लागू करने में सरकार के कदम धीमे रहे हैं। इंश्योरेंस, पेंशन और दूसरे वित्तीय सुधारों पर गाड़ी आगे नहीं बढ़ी। घरेलू बाजार में ब्याज की ऊंची दरों की वजह से औद्योगिक उत्पादन में गिरावट आई। निवेश और विस्तार रुक गया। कोयले और गैस की सप्लाई में कमी होने से ऊर्जा सेक्टर को काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ा। पूंजी निवेश में गिरावट आई। इन्फ्रास्ट्रक्चर सेक्टर में निवेश की कोई बेहतर नीति नहीं रही। वित्तीय बाजारों में सुधारों के कानूनों को लागू करने में सरकार पीछे रह गई। राजकोषीय घाटे का आकार भी बढ़ता गया। विनिवेश के मोर्चे पर भी सरकार की रणनीति सफल नहीं दिखी।

कृषि सुधारों में कोई नयापन देखने को नहीं मिला। जीएसटी पर सहमति नहीं बन पाई। रिटेल में एफडीआई का बिल पारित नहीं हो सका। इन्फ्रास्ट्रक्चर के मामले में सरकार ने कुछ टैक्स फ्री बॉन्ड लाने का जो कदम उठाया, उससे कोई खास लाभ नहीं हुआ। सरकार द्वारा कोयला सप्लाई सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रपति का आदेश लाया गया। खनन नीति पर कोई स्पष्ट फैसला नहीं हो सका। स्थिति यह बनी कि ऐसी नीतिगत विफलताओं की वजह से विदेशी निवेशकों का भारतीय अर्थव्यवस्था में विश्वास कम हुआ।

हालांकि टेलीकॉम क्रांति भारतीय अर्थव्यवस्था की सबसे बड़ी उपलब्धि रही

है, लेकिन सरकार के 2जी स्पेक्ट्रम घोटाले की जद में आने के बाद टेलीकॉम क्रांति का फायदा नहीं उठाया जा सका। बड़े–बड़े घोटालों में नौकरशाहों और कॉरपोरेट घराने के लोगों के अदालत में पहुंच जाने के बाद नौकरशाही कोई भी बड़ी परियोजना को हाथ में लेने से घबराती रही।

स्थिति यह है कि कारगर आर्थिक कदमों के अभाव में महंगाई में वृद्धि और औद्योगिक उत्पादन की नकारात्मक दर दिखाई दे रही है। निस्संदेह देश के करोड़ों लोगों की आर्थिक मुश्किलें महंगाई ने बढ़ा दी है। करीब छह महीने तक शांत रहने के बाद मई 2012 में खाद्य महंगाई दर 10 फीसदी के आंकड़े को पार कर गई। यह पिछले साल की इसी अवधि की तुलना में डेढ़ गुना अधिक है।

बाजार में महंगाई की आग फिर से भड़कने लगी है। खाने–पीने की चीजों खासकर फल, दूध और सब्जियों की कीमतों में भारी वृद्धि ने महंगाई दर को बढ़ाया है। इसी तरह देश के शेयर बाजारों में कठिन दौर जारी है और निकट भविष्य में बाजार सुधरने की संभावना कम है।

बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज का सेंसेक्स और नेशनल स्टॉक एक्सचेंज का निफ्टी गिरावट के साथ निराशाजनक स्थिति में है। विदेशी संस्थागत निवेशक (एफआईआई) और देशी निवेशक भी घबराहट में शेयर बाजार से अपना धन निकाल रहे हैं। देश का विदेश व्यापार परिदृश्य भी चुनौतियों के संकेत दे रहा है।

नवीनतम आंकड़े बता रहे हैं कि भारत का विदेश व्यापार घाटा तेजी से बढ़ते हुए चिंताजनक रूप लेता जा रहा है। वस्तुतः वर्ष 2010–11 में भारत का विदेश व्यापार घाटा 132 अरब डॉलर के स्तर पर था, जो वर्ष 2011–12 के दौरान 184 अरब डॉलर के स्तर पर पहुंच गया है।

यही नहीं, वित्त वर्ष 2012–13 भारतीय निर्यातकों के लिए अपेक्षाकृत अधिक चुनौती वाला होगा। बढ़ता आयात, गिरता रुपया देश की आगे बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था के साथ आयात की जरूरत बढ़ती जा रही है। देश में जिस तेजी से तेल का आयात बढ़ रहा है, उसके कारण भारत का तेल आयात खर्च चिंताजनक संकेत दे रहा है। भारत में तेल की खपत का तीन चौथाई तेल आयात किया जाता है, जो लगातार बढ़ता जा रहा है।

केवल तेल ही नहीं, बल्कि बीते सालों के दौरान दूसरी चीजों के आयात में भी तेजी दर्ज की गई है। इतना ही नहीं, इन दिनों डॉलर के मुकाबले रुपये में लगातार गिरावट अर्थव्यवस्था के लिए एक बड़ी चिंता बन गई है।

23 मई को भारतीय रुपया डॉलर के मुकाबले अब तक की सबसे बड़ी गिरावट के साथ दिखाई दिया। एक डॉलर की कीमत 56 रुपये को भी पार कर गई। ऐसी मुश्किल भरी आर्थिक चुनौतियों का सामना हम तभी कर पाएंगे, जब भ्रष्टाचार पर अंकुश लगे और आर्थिक सुधारों के लिए ठोस कदम उठाए जाएं। अब सरकार को विनिवेश प्रक्रिया में तेजी लानी होगी।

खासतौर से सार्वजनिक उपक्रमों में सरकारी हिस्सा खरीदने के लिए बैंकों, एलआईसी एवं विभिन्न सरकारी संस्थानों को आगे बढ़ाना होगा। सरकार को आर्थिक सुधार की दिशा में आगे बढ़ते हुए पेंशन सुधार, कंपनी विधेयक, वित्त एवं अन्य क्षेत्रों में सुधारों के लिए निर्णायक स्थिति में पहुंचना होगा तथा कर सुधारों को लागू करना होगा।

कर कानून में सुधार की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम प्रत्यक्ष कर संहिता भी है। इसे वर्ष 2012 में लागू करने के पुरजोर प्रयास होने चाहिए। इसी तरह सरकार द्वारा वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) कानून भी लागू कराने के कारगर प्रयास होने चाहिए।

समस्या है तो समाधान भी विभिन्न आर्थिक कारणों से अर्थव्यवस्था की वर्तमान हालत देश के कारोबार और बाजार के लिए घातक सिद्ध हो रही है। अर्थव्यवस्था में बढ़ रही मुश्किलों को रोकने के लिए हमें कई कदम उठाने होंगे। हमें औद्योगिक उत्पादन बढ़ाना होगा। एफडीआई बढ़ाने के प्रयास करने होंगे। बढ़ते हुए विदेश व्यापार घाटे को कम करना होगा। सोने के आयात को नियंत्रित करना होगा। पेट्रोलियम उत्पादों पर वांछनीय रूप से सब्सिडी कम करनी होगी।

जहां एक ओर मंदी की चुनौतियों के बीच भी निर्यात बढ़ाने होंगे, वहीं दूसरी ओर आयात को नियंत्रित करने की रणनीति बनानी होगी। यह जरूरी होगा कि रुपये की मजबूती के लिए आर्थिक सुधारों को गति दी जाए।

क्या हम आशा करें कि सरकार अब आर्थिक सुधारों के मोर्चे पर गंभीर होकर खासतौर से इन्फ्रास्ट्रक्चर सब्सिडी, राजकोषीय घाटे और निवेश के मुद्दे पर नए सिरे से कदम उठाकर देश की आर्थिक तस्वीर को संवारेगी?

निस्संदेह हमें इस समय सबसे अधिक कर्ज में डूबे अर्थव्यवस्था वाले यूरोजोन के देश ग्रीस के प्रधानमंत्री लुकास की यह बात याद रखनी होगी कि यदि ग्रीस में उपयुक्त रूप से लोकलुभावन योजनाओं को नियंत्रित किया जाता और घोटालों को रोका जाता तो आज ग्रीस को आर्थिक बदहाली का सामना नहीं करना पड़ता। भारतीय अर्थव्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में भी ऐसे ही कठोर कदमों के अलावा कोई अन्य विकल्प भी नहीं है। ❑

स्वदेशी जैविक (प्राकृतिक) खेती वर्तमान की आवश्यकता

जैविक खेती में पर्यावरण को किसी भी प्रकार की हानि नही होती यथा हमारे मित्र कीट व पर्यावरण शुद्ध बनी रहती है। जैविक खेती में बाजार से कुछ लाना नही पड़ता है। सब कुछ हमारे आस–पास ही होता है। मूल लागत कम होती है व जो मिलता है बचत ही बचत होती है।

■ हुकमचन्द पाटीदार

जैविक खेती देशी खेती का उन्नत तरीका है जहां प्रकृति व पर्यावरण को संतुलित रखते हुए खेती की जाती है। इसमें रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग नही करके खेत में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, जीवाणु खाद, फसल, अवशेष, जीवामृत, गोमूत्र आदि द्वारा पौधों को पोषक तत्व दिये जाते हैं साथ ही फसलों को बचाया जाता है।

हमारा देश आजाद हुआ लेकिन खाने के लिए अनाज विदेशों से मंगाया जाता था। ऐसे में हरित क्रान्ति का दौर आया (1966–67 से 1990–91) देश अनाज उत्पादन में आत्मनिर्भर तो बन गया परंतु हमारी परंपरागत खेती के तरीकों को छोड़कर रासायनिक खादों, कीटनाशकों व मशीनीकरण का दौर शुरू हो गया जिसके कारण हमारे पर्यावरण का सन्तुलन बिगड़ा व दूसरी ओर भूमि की उर्वरा शक्ति घटने लगी। फसलों पर किया जाने वाला खर्च बढ़ने लगा। बाजार मूल्य यथावत रहा। जिससें किसान कर्ज में डूबने लगा। आज हालात यह है कि किसान कर्ज के मारे बोझ के कारण आत्महत्याएं करने लगा जो कि एक कलंक है।

ऐसे में जैविक (प्राकृतिक) खेती अंधेरे में रोशनी के समान नजर आने लगी। जैविक खेती में अपनत्व व लाभ ही लाभ है:–

1. **पर्यावरण लाभ** : जैविक खेती में पर्यावरण को किसी भी प्रकार की हानि नही होती यथा हमारे मित्र कीट व पर्यावरण शुद्ध बनी रहती है।
2. **उत्पादकता वृद्धिः** धरा की उर्वराशक्ति बढ़ने से धीरे–धीरे उत्पादन बढ़ता है जिससे बाद में गुणोत्तर वृद्धि होती चली जाती है। जो कि किसानों के लिए खुशहाली लेकर आती है।
3. **धरती माता, मानव पशुओं में आपसी समन्वयः** प्राणी मात्र, माता के बिना अधूरा है या जिसकी कल्पना नही की जा सकती। स्वस्थ धरा, स्वस्थ पर्यावरण, स्वस्थ प्राणी।
4. **आर्थिक लाभः** जैविक खेती में बाजार से कुछ लाना नही पड़ता है। सब कुछ हमारे आस–पास ही होता है। मूल लागत कम होती है व जो मिलता है बचत ही बचत होती है।

इसी व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए जैविक किसानों द्वारा संचालित झालावाड़ मिले में प्रक्ष्य जैविक कृषि के लिए प्रमाणिक किया गया संस्थान द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में जैविक विशेषज्ञों द्वारा जैविक कृषक जागृति प्रभ्यास वर्ग लगाकर जैविक कृषि हेतु प्रशिक्षित किया जाता है।

वर्तमान में झालावाड़ में 22 गांव में 128 कृषकों द्वारा 233 एकड़ जमीन पर जैविक कृषि का प्रांरभ हुआ। इससे किसानों का लागत मूल्य घटाकर कम किया गया एवं जैविक कृषि उत्पाद का बाजार में 30 से 35 प्रतिशत अधिक मूल्य मिलने लगा। जैविक कृषक इस समय कृषि में लाभ कमाने लगे है। एवम् प्रसन्नचित होकर इस व्यवस्था को बढ़ाने में लगे हैं। जैविक कृषि ग्राम मानपुरा में सन् 2004 से प्रारंभ हुई स्वामी विवेकानंद जैविक कृषि अनुसंधान केन्द्र पर जैविक कृषकों कृषि महाविद्यालय के छात्रों एवं विभिन्न एन. जी. वो. को खाद बनाने कीट नियंत्रक एवं फसलों कों रोगों से बचाने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। स्वामी विवेकानंद जैविक कृषि अनुसंधान केन्द्र मानपुरा को जैविक कृषि, प्रमाणीकरण संस्था से प्रमाणित करवाया गया। इस केन्द्र द्वारा उत्पादित कृषि उत्पाद को विदेशों में भी एक्सपोर्ट किया गया एंव स्थानीय स्तर पर कृषि उत्पादों की विक्रय हेतु होम–डिलीवरी देने की व्यवथा की गई साथ ही कृषि उत्पादों में खाद्यान्न, दालें, एंव मसाले व फलों में सन्तरा को विशेष स्थान मिला हैं। ❑

जल संधि

एक और कूटनीतिक विफलता

विश्व के किसी भी देश में जल बंटवारा संधि में एक देश दूसरे देश को इसके आसपास भी जल देने को राजी नहीं हुआ है। पड़ोसी देशों को पानी देने में भारत की आत्मघाती उदारता का कोई सानी नहीं है, जबकि चीन से आने वाली नदियों के विषय में वह उसे जल बंटवारे की अवधारणा पर ही राजी नहीं कर सका है। पानी के संबंध में भारत के पास अधिक विकल्प नहीं हैं। बांग्लादेश के विपरीत वह पहले ही पानी की जबरदस्त किल्लत झेल रहा है।

■ ब्रह्म चेलानी

प्रस्तावित तीस्ता संधि से पता चलता है कि भारत ने सिंधु संधि से कोई सबक नहीं सीखा। तीस्ता का उद्गम स्थल सिक्किम है और यह बांग्लादेश में ब्रह्मपुत्र में मिलती है। तीस्ता उत्तरी पश्चिम बंगाल के लिए जीवनरेखा के समान है, इसलिए बंगाल के दीर्घकालीन हितों की अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। जीवन के लिए जल अनिवार्य संसाधन है। पानी की किल्लत राजनीतिक के साथ–साथ गंभीर आर्थिक मुद्दा बनती जा रही है।

भारत में कमजोर केंद्र सरकार के चलते सत्ता राज्यों की ओर हस्तांतरित होते देख अमेरिका की विदेशमंत्री हिलेरी क्लिंटन ने अमेरिकी हित साधने के लिए भारत यात्रा का पहला पड़ाव कोलकाता में किया। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी से मुलाकात से पहले हिलेरी क्लिंटन ने भारत को रिटेल व्यवसाय में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के दरवाजे खोलने और तीस्ता नदी के जल बंटवारे पर बांग्लादेश के साथ समझौते का दबाव बनाया। इन मुद्दों का ममता बनर्जी विरोध कर रही हैं। समझा–बुझा कर रास्ते पर लाना भी एक कला है, जिसमें प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह पूरी तरह विफल रहे हैं।

इस कारण वह राजनीतिक दुविधा से ग्रस्त सरकार को एक के बाद एक नए–नए संकटों में फंसाते रहे हैं। परिणामस्वरूप वह महत्वपूर्ण मसलों पर फैसलों को टालते जा रहे हैं और इसका दोष सहयोगी दलों पर मढ़ते रहे हैं। प्रधानमंत्री की इसी प्रवृत्ति के कारण विदेशी नेता सीधे–सीधे प्रमुख मुख्यमंत्रियों से मिलने को बाध्य हुए हैं। पानी के मुद्दे को ही लें। भारतीय संविधान के मुताबिक जल राज्य स्तरीय विषय है। इसके बावजूद मनमोहन सिंह सरकार ने बांग्लादेश के साथ तीस्ता जल संधि के प्रस्ताव पर पश्चिम बंगाल के हितों की पूरी तरह अनदेखी कर दी।

वास्तव में, पहले तो नई दिल्ली ने इस मुद्दे पर ढाका के साथ तमाम शर्ते तय कर दीं। ये शर्ते बांग्लादेश के पक्ष में थीं और इसके बाद पश्चिम बंगाल से कहा कि इस समझौते में कोई बदलाव नहीं हो सकता। राज्यों के हितों का मान रखना संघवाद का सार है। राज्यों को अपनी बपौती मानने की प्रवृत्ति ने तब से जोर पकड़ा था, जब केंद्र सरकार मजबूत हुआ करती थी।

जवाहरलाल नेहरू ने 1960 में सिंधु जल संधि करके जम्मू–कश्मीर और कुछ

हद तक पंजाब के हितों पर आघात किया था। इस असाधारण संधि में भारत ने सिंधु जल का 80.52 फीसदी हिस्सा पाकिस्तान को दे दिया था। आधुनिक विश्व इतिहास में जल बंटवारे की ऐसी मिसाल देखने को नहीं मिलती।

असल में भारत द्वारा पाकिस्तान के लिए छोड़े जाने वाले जल की मात्रा एक संधि के तहत अमेरिका द्वारा मैक्सिको के लिए छोड़े गए जल की तुलना में 90 गुना अधिक है। भारत को तीस्ता संधि की नसीहत देने वाली क्लिंटन भूल रही हैं कि अमेरिका ने कोलोरेडो नदी का पानी सात राज्यों में बांट दिया है और मैक्सिको के लिए नाममात्र का हिस्सा ही छोड़ा है। सिंधु संधि उस दौर में की गई जब भारत के अधिकांश हिस्सों में पानी की कमी कोई मुद्दा नहीं था। नेहरू यह अनुमान लगा पाने में विफल रहे कि विकास और आबादी के दबाव में पानी एक बड़े संकट में तब्दील हो सकता है।

आज भारत उस पाकिस्तान को पानी देने को मजबूर है, जिसने उसके खिलाफ आतंकवाद की जंग छेड़ रखी है, जबकि जल संसाधन समूह के अनुसार 2010 तक इन नदियों के इलाके में पानी की मांग व आपूर्ति में 52 फीसदी का अंतर है। इस संधि ने जम्मू–कश्मीर को इसके एकमात्र संसाधन पानी से भी वंचित कर दिया। राज्य की प्रमुख नदियों–चिनाब और झेलम को पाकिस्तान के इस्तेमाल के लिए आरक्षित कर दिया गया है। इस कारण भारतीय राज्य में असंतोष और अलगाव की भावना भर गई है।

इसी कारण 2002 में राज्य सरकार को विधेयक पारित करने के लिए मजबूर होना पड़ा, जिसमें इस संधि को रद करने का प्रस्ताव है। जम्मू–कश्मीर में बिजली–पानी की कमी और इससे उपजे जनअसंतोष को दूर करने के लिए केंद्र सरकार ने बगलिहार और किशनगंगा पर पनबिजली परियोजनाएं शुरू कीं, किंतु मामले को अंतरराष्ट्रीय मंचों पर ले जाकर पाकिस्तान ने इन परियोजनाओं पर काम को रुकवा दिया।

प्रस्तावित तीस्ता संधि से पता चलता है कि भारत ने सिंधु संधि से कोई सबक नहीं सीखा। तीस्ता का उद्गम स्थल सिक्किम है और यह बांग्लादेश में ब्रह्मपुत्र में मिलती है। तीस्ता उत्तरी पश्चिम बंगाल के लिए जीवनरेखा के समान है, इसलिए बंगाल के दीर्घकालीन हितों की अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। जीवन के लिए जल अनिवार्य संसाधन है। पानी की किल्लत राजनीतिक के साथ–साथ गंभीर आर्थिक मुद्दा बनती जा रही है।

तीस्ता जल संधि में ममता बनर्जी को बाधा के रूप में पेश करके मनमोहन सिंह सरकार ने अपनी नासमझी से भारत पर दबाव बढ़ा लिया है। हिलेरी क्लिंटन के रुख से प्रोत्साहित होकर बांग्लादेश के विदेशमंत्री ने चेतावनी दी है कि अगर तीस्ता संधि परवान नहीं चढ़ती तो भारत–बांग्लादेश के बीच हुई संधियों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

भारत ने हाल ही में उदारतापूर्वक घोषणा की है कि वह बांग्लादेश पर एक अरब डॉलर के ऋण में से 20 करोड़ डॉलर माफ कर रहा है। भारत को बांग्लादेश की उदार मदद जारी रखनी चाहिए, किंतु यह पारस्परिक आदान–प्रदान के आधार पर होनी चाहिए। भारत बांग्लादेश के साथ तीस्ता से बड़ी नदी गंगा के जल बंटवारे की संधि में भी पक्षकार है।

1996 में हुई गंगा संधि में बांग्लादेश को सूखे मौसम में न्यूनतम पानी देने का समझौता हुआ था। यह अंतरराष्ट्रीय जल संबंधों में एक नया सिद्धांत है। इस संधि के कारण गंगा का पानी दो देशों में बराबर बंट रहा है। इस संधि के तहत मार्च से मई तक के सूखे मौसम में दोनों देशों को दस–दस दिनों के लिए 35,000 क्यूसेक पानी के बंटवारे पर रजामंदी हुई है।

इस संधि के कारण भारत फरक्का बैराज से गंगा की सहायक भगीरथी–हुगली में पानी का स्थानांतरण करने में असमर्थ हो गया है। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि सूखे मौसम में कोलकाता बंदरगाह से गंदा पानी नहीं निकल रहा। इस जटिल जल संधि व्यवस्था में विश्वास बहाली के लिए दोनों पक्षों की निगरानी की व्यवस्था की गई है।

भारत और बांग्लादेश बिना किसी तीसरे पक्ष की भूमिका के तीस्ता संधि पर हस्ताक्षर कर सकते हैं। यह संधि 21वीं सदी की विश्व की पहली जलसंधि होगी।

बांग्लादेश तीस्ता नदी का आधा जल चाहता है। विश्व के किसी भी देश में जल बंटवारा संधि में एक देश दूसरे देश को इसके आसपास भी जल देने को राजी नहीं हुआ है। पड़ोसी देशों को पानी देने में भारत की आत्मघाती उदारता का कोई सानी नहीं है, जबकि चीन से आने वाली नदियों के विषय में वह उसे जल बंटवारे की अवधारणा पर ही राजी नहीं कर सका है। पानी के संबंध में भारत के पास अधिक विकल्प नहीं हैं। बांग्लादेश के विपरीत यह पहले ही पानी की जबरदस्त किल्लत झेल रहा है।

संयुक्त राष्ट्र के आंकड़ों के अनुसार जहां बांग्लादेश में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष उपलब्धता 8,252 क्यूबिक मीटर जल है, वहीं भारत में यह आंकड़ा 1560 क्यूबिक मीटर है। ❑

साठ साल का सफर

60 वर्षों के दौरान संसद में देश के विभिन्न वर्गों, जातियों को मिलने वाले प्रतिनिधित्व का लोकतांत्रिकरण हुआ है। स्टैंडिंग कमेटियों के गठन से केंद्रीय बजट की संसदीय पड़ताल में सुधार आया है। कार्यवाही के टीवी पर प्रसारण से संसद जनता के करीब आई है। भ्रष्टाचार में लिप्त सांसदों के निलंबन और निष्कासन से एक हद तक संसद में लोगों की आस्था बची रही है। फिर भी सदन की कार्यवाही में व्यवधान एक नई समस्या बन कर उभरा है, जिसे दूर किया जाना बेहद जरूरी है. . .हमारी संसद 60 साल की हो गई है और अगर अटल बिहारी वाजपेयी के शब्दों को उधार लेकर कहें तो यह न थकी है और न ही रिटायर हुई है।

■ ए. सूर्यप्रकाश

13 मई को संसद अपनी साठवीं वर्षगांठ मनाई। रविवार होने के बावजूद इस दिन संसद की विशेष कार्यवाही चली। संसद के साठवें जन्मदिवस के उत्सव के बीच यह उसके कामकाज, कार्यकुशलता और प्रासंगिकता पर नजर डालने का सही वक्त है। शुरुआत सकारात्मक बिंदुओं से करते हैं। संसद के दोनों सदनों की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि ये भारत के विभिन्न वर्गों, समुदायों, जातियों, पेशों, पंथों का पहले से कहीं अधिक प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

पहली लोकसभा में करीब 36 फीसदी वकील, 10 फीसदी पत्रकार व लेखक थे और इनमें से अधिकांश प्रभावशाली हिंदू जातियों से संबंध रखते थे। वंचित समूहों के राजनीतिक सशक्तिकरण के कारण पिछले दो दशकों में लोकसभा का संयोजन पहले से कहीं अधिक संतुलित हुआ है। पहली लोकसभा में 112 सदस्य दसवीं पास नहीं थे। 14वीं लोकसभा में यह संख्या घटकर 19 रह गई है। इसी प्रकार पहली लोकसभा में 277 स्नातक, स्नातकोत्तर थे। 14वीं लोकसभा में 428 सदस्यों के पास यह योग्यता है।

वंचित वर्गों के राजनीतिक सशक्ति–करण ने राज्य विधानसभाओं का संयोजन भी बदला है और इसका असर राज्यसभा में देखा जा सकता है, क्योंकि राज्यसभा के सदस्यों के चुनाव में विधायकों की प्रमुख भूमिका होती है। ऊपरी सदन में भारतीय समाज की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विविधता का प्रतिबिंब देखा जा सकता है।

पहली लोकसभा में करीब 36 फीसदी वकील, 10 फीसदी पत्रकार व लेखक थे और इनमें से अधिकांश प्रभावशाली हिंदू जातियों से संबंध रखते थे। वंचित समूहों के राजनीतिक सशक्तिकरण के कारण पिछले दो दशकों में लोकसभा का संयोजन पहले से कहीं अधिक संतुलित हुआ है। पहली लोकसभा में 112 सदस्य दसवीं पास नहीं थे। 14वीं लोकसभा में यह संख्या घटकर 19 रह गई है। इसी प्रकार पहली लोकसभा में 277 स्नातक, स्नातकोत्तर थे। 14वीं लोकसभा में 428 सदस्यों के पास यह योग्यता है।

संसद में सकारात्मक प्रकृति की कुछ अन्य घटनाओं में कमेटी व्यवस्था की शुरुआत और 1993 में स्पीकर शिवराज पाटिल द्वारा संसद की कार्यवाही का टीवी पर प्रसारण शामिल हैं। विभिन्न विभागों की कमेटियों के गठन से संसद की कार्यकुशलता

में सुधार हुआ है और सांसदों की विशेष योग्यताओं का सदुपयोग संभव हुआ है।

संसदीय कार्यवाही के टीवी पर प्रसारण ने संसद से परदा उठा दिया है और अब लोग इसका असली रंग देख पा रहे हैं। इससे सांसदों के आचार–व्यवहार में भी सुधार आया है। इन सकारात्मक पहलुओं के साथ–साथ संसद में नकारात्मक घटनाओं की सूची काफी लंबी है। प्रश्नकाल अपनी महत्ता खो चुका है। प्रश्नकाल में भूपेश गुप्ता, इंद्रजीत गुप्ता, अटल बिहारी वाजपेयी, मधु लिमये, पीलू मोदी और मधु दंडवते जैसे प्रखर नेता जब सवाल–जवाब पर उतरते थे तो अच्छे–अच्छे मंत्रियों को पसीना छूट जाता था।

आज सांसद बिना तैयारी या नैतिक साहस के रस्मअदायगी मात्र के लिए सवाल पूछते हैं। इसी कारण अक्सर उन्हें चुप करा दिया जाता है। ध्यानाकर्षण प्रस्ताव आदि भी बेजान हो चुके हैं। सरकार विपक्ष से इसलिए नहीं घबराती, क्योंकि वह खुद नैतिक धरातल पर नहीं खड़ा है। अगर सांसदों की बात की जाए तो परीक्षा परिणाम निराश करने वाला है। सांसदों और जनता के बीच दूरी बढ़ती जा रही है।

पांचवें दशक में नारा था – सादा जीवन उच्च विचार। अब यह आदर्श उच्च जीवन कोई विचार नहीं में बदल गया है। सांसद अपने पैसे और रुतबे का प्रदर्शन करते हैं और आम आदमी से कट गए हैं। वे अपनी गाड़ियों पर लाल बत्ती लगाना चाहते हैं, अपने विशेषाधिकारों का दुरुपयोग करने से नहीं हिचकते, संसदीय दायित्वों का निर्वहन नहीं करते, संसदीय कार्यवाही और संसदीय समितियों की बैठक से अधिकांश सदस्य नदारत रहते हैं। यह सूची अनंत है और इसका दुष्प्रभाव संसद की कार्यवाही पर पड़ता है।

सार्वजनिक जीवन में मानकों की स्थापना के लिए भारत की संसद ने सांसद एचजी मुद्गल को बर्खास्त कर एक नजीर बनाई थी। मुद्गल ने बांबे बुलियन एसोसिएशन को फायदा पहुंचाने के लिए मुद्दा उठाया था। इसके लिए उन्होंने 2700 रुपये लिए थे, किंतु यह घटना 1951 की है, जब प्रोविजनल पार्लियामेंट कार्यरत थी।

हालांकि 1952 में लोकसभा और राज्यसभा का गठन होने के बाद नैतिक मुद्दों पर शिथिलता छाने लगी। शराब के आयात की अनुमति के लिए एक सदस्य द्वारा 20 सांसदों के जाली हस्ताक्षर करने पर संसद मौन रही। बाद में अदालत में उस पर मुकदमा चला और उसे जेल हुई।

जन असंतोष को देखते हुए 1990 के दशक में स्पीकर शिवराज पाटिल ने सदस्यों के लिए आचार संहिता का प्रस्ताव रखा था और लोकसभा की विशेषाधिकार समिति को मामला सौंपा था। दोनों सदनों में आचार कमेटियों का गठन किया गया, किंतु कुल मिलाकर कमेटियां सुसुप्तावस्था में ही रहीं। इस बीच सांसदों के नैतिक मापदंड बराबर गिरते चले गए।

समाचार चैनलों द्वारा किए गए दो स्टिंग ऑपरेशनों ने इसकी पोल खोल दी। इनमें से पहला ऑपरेशन सवाल पूछने के लिए सदस्यों द्वारा पैसे वसूलने से जुड़ा था। कुछ सांसद 30 हजार से 1.1 लाख रुपये के बदले संसद में सवाल पूछने के लिए राजी थे। जैसे ही यह टीवी चैनल पर प्रसारित हुआ, जनता हतप्रभ रह गई। इस घटना की जांच के लिए एक कमेटी का गठन किया गया। इसकी रिपोर्ट पर 11 सांसदों को संसद से बर्खास्त कर दिया गया।

करीब–करीब इसी समय एक और खुलासा हुआ। एक चैनल ने दिखाया कि चार सांसद सांसद निधि के तहत परियोजना की अनुशंसा के लिए रुपयों की मांग कर रहे थे। एक बार फिर घोटाले की जांच के लिए लोकसभा कमेटी का गठन किया गया और सांसदों को दोषी पाया गया। इन सांसदों को सदन से निलंबित करने की सिफारिश की गई। सदन ने इस रिपोर्ट पर कार्रवाई की।

इसी प्रकार एक सांसद कबूतरबाजी में लिप्त पाया गया। उसका भी निष्कासन किया गया। इस लेखा–जोखा का क्या नतीजा रहा?

जैसाकि पहले बताया गया है कि 60 वर्षों के दौरान संसद में देश के विभिन्न वर्गों, जातियों को मिलने वाले प्रतिनिधित्व का लोकतांत्रिकरण हुआ है। स्टैंडिंग कमेटियों के गठन से केंद्रीय बजट की संसदीय पड़ताल में सुधार आया है। कार्यवाही के टीवी पर प्रसारण से संसद जनता के करीब आई है। भ्रष्टाचार में लिप्त सांसदों के निलंबन और निष्कासन से एक हद तक संसद में लोगों की आस्था बची रही है। फिर भी सदन की कार्यवाही में व्यवधान एक नई समस्या बन कर उभरा है, जिसे दूर किया जाना बेहद जरूरी है।

संसद का तीस फीसदी से अधिक समय व्यवधान की भेंट चढ़ जाता है। स्वतंत्र नागरिकों द्वारा संसद के दोनों सदनों के कामकाज की पड़ताल वक्त की जरूरत है। पिछले साठ वर्षों में इस प्रकार का कोई परीक्षण नहीं हुआ है। अंततः चूंकि हमारी संसद की साठवीं वर्षगांठ का अवसर है, हमें सकारात्मक बिंदु पर बात खत्म करनी चाहिए। हमारी संसद 60 साल की हो गई है और अगर अटल बिहारी वाजपेयी के शब्दों को उधार लेकर कहें तो यह न थकी है और न ही रिटायर हुई है। ❑

घुसपैठियों की शरणस्थली

हैदराबाद, पंजाब, जम्मू, जलालाबाद, मेरठ, दिल्ली और खुर्जा में हजारों रोहयांग म्यांमारी अवैध रूप से आ बसे और सरकार को कोई जानकारी ही नहीं है। हजारों की संख्या में म्यांमार से चलकर यदि ये दिल्ली पहुंचे हैं तो किसने इतने बड़े वर्ग का नेतृत्व किया किसने? इनका वित्तपोषण किया और इन सबका समन्वय आखिर किसने किया? गृहमंत्री ने खानापूर्ति के लिए जांच कराने की बात की, किंतु यह कैसी सरकार है, जो आतंकवाद से लड़ने के लिए अभूतपूर्व कारगर एजेंसी बनाने का दावा करती है और दूसरी ओर हजारों की संख्या में अवैध घुसपैठ की उसे जानकारी तक नहीं होती?

■ बलवीर पुंज

पिछले दिनों दिल्ली उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप के बाद म्यांमार के हजारों अवैध घुसपैठियों को दिल्ली से बाहर निकालना संभव हुआ, जिन्हें दिल्ली पुलिस ने वसंत कुंज के समीप सुल्तानगढ़ी में शरण लेने की अनुमति दी थी, किंतु सरकार ने उन्हें देश से निकालने की अब तक कोई घोषणा नहीं की है। सेक्युलर दलों के सहयोग से देश में अब भी करीब डेढ़ करोड़ बांग्लादेशी घुसपैठिए न केवल सुरक्षित जिंदगी गुजार रहे हैं, बल्कि राशन कार्ड, मतदाता कार्ड बनवाने में भी सफल हो रहे हैं।

इसलिए रोहयांग म्यांमारी घुसपैठियों की भारत में स्थायी रूप से बसने की आशंका निराधार नहीं है। रोहयांग म्यांमारी बांग्लादेश के चटगांव में हजारों बौद्ध चकमाओं के नरसंहार के अपराधी हैं, जिन्हें बांग्लादेश और म्यांमार, दोनों ने इस जघन्य कांड के लिए खदेड़ भगाया है।

रोहयांग म्यांमारी नागरिक पिछले दिनों हजारों की संख्या में दिल्ली स्थित संयुक्त राष्ट्र के दफ्तर के सामने एकत्रित हुए और उससे भारत में शरणार्थी का दर्जा दिलाने की मांग की। भारत को रक्तरंजित करने में लगे विभिन्न आतंकी संगठनों के खिलाफ एक सशक्त व मजबूत एनसीटीसी नामक एजेंसी का प्रस्ताव लाकर केंद्र सरकार राज्य सरकारों से रार ठाने बैठी है।

मैंने पिछले दिनों राज्यसभा में यह मामला उठाया था और सरकार से जानना चाहा था कि आखिर बिना वीजा ये लोग दिल्ली कैसे धमक आए? उन्हें संरक्षण और समर्थन देने वाले कौन से व्यक्ति या संगठन हैं? इन सवालों का सरकार के पास कोई जवाब नहीं था।

हैदराबाद, पंजाब, जम्मू, जलालाबाद, मेरठ, दिल्ली और खुर्जा में हजारों रोहयांग म्यांमारी अवैध रूप से आ बसे और सरकार को कोई जानकारी ही नहीं है। हजारों की संख्या में म्यांमार से चलकर यदि ये दिल्ली पहुंचे हैं तो किसने इतने बड़े वर्ग का नेतृत्व किया किसने? इनका वित्तपोषण किया और इन सबका समन्वय आखिर किसने किया? गृहमंत्री ने खानापूर्ति के लिए जांच कराने की बात की, किंतु यह कैसी सरकार है, जो आतंकवाद से लड़ने के लिए अभूतपूर्व कारगर एजेंसी बनाने का दावा करती है और दूसरी ओर हजारों की संख्या में अवैध घुसपैठ की उसे जानकारी तक नहीं होती?

क्या यह देश धर्मशाला है, जहां कभी बांग्लादेश से तो कभी म्यांमार से अवैध घुसपैठिए बेरोकटोक आ धमकते हैं और स्थानीय जनजीवन को अस्तव्यस्त करते हैं? क्या वोट बैंक की राजनीति के लिए इन अवैध घुसपैठियों को इसलिए शरणार्थी मान

क्या यह देश धर्मशाला है, जहां कभी बांग्लादेश से तो कभी म्यांमार से अवैध घुसपैठिए बेरोकटोक आ धमकते हैं और स्थानीय जनजीवन को अस्तव्यस्त करते हैं? क्या वोट बैंक की राजनीति के लिए इन अवैध घुसपैठियों को इसलिए शरणार्थी मान लेना चाहिए कि वे मजहब विशेष के हैं? रोहयांग म्यांमारी और बांग्लादेशी घुसपैठियों का भारत से दूर–दूर का संपर्क नहीं है, फिर भी उन्हें संरक्षण दिलाने के लिए सेक्युलर दलों का एक बड़ा तबका चिंताग्रस्त है, किंतु उन हजारों हिंदुओं के लिए कोई फिक्रमंद दिखाई नहीं देता जो मजहबी चरमपंथ और हिंसा से खौफजदा होकर बांग्लादेश और पाकिस्तान से पलायन कर अपने वतन लौटे हैं। लाखों कश्मीरी पंडित अपने ही देश में बेगानों की तरह शरणार्थी शिविरों में जीवनयापन कर रहे हैं, किंतु उनकी घरवापसी की चिंता नहीं होती।

लेना चाहिए कि वे मजहब विशेष के हैं? रोहयांग म्यांमारी और बांग्लादेशी घुसपैठियों का भारत से दूर–दूर का संपर्क नहीं है, फिर भी उन्हें संरक्षण दिलाने के लिए सेक्युलर दलों का एक बड़ा तबका चिंताग्रस्त है, किंतु उन हजारों हिंदुओं के लिए कोई फिक्रमंद दिखाई नहीं देता जो मजहबी चरमपंथ और हिंसा से खौफजदा होकर बांग्लादेश और पाकिस्तान से पलायन कर अपने वतन लौटे हैं। लाखों कश्मीरी पंडित अपने ही देश में बेगानों की तरह शरणार्थी शिविरों में जीवनयापन कर रहे हैं, किंतु उनकी घरवापसी की चिंता नहीं होती। क्यों? क्या इसलिए कि वे हिंदू हैं?

देश का विभाजन मजहबी जुनून के कारण हुआ। बड़े पैमाने पर रक्तपात हुआ। पाकिस्तान ने खुद को इस्लामी राष्ट्र के रूप में स्थापित कर लिया। 11 अगस्त, 1947 को मोहम्मद अली जिन्ना ने पाकिस्तान की संसद के माध्यम से यह भरोसा दिलाया था कि पाकिस्तान में अल्पसंख्यक बराबरी के अधिकार से सुरक्षित रहेंगे, किंतु उनके देहावसान से वह सपना ही रह गया।

इसके बाद 1950 में तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और पाकिस्तानी प्रधानमंत्री लियाकत अली खान के बीच एक संधि हुई। इसमें भी भरोसा दिलाया गया कि विभाजन के बाद दोनों देश अपने–अपने अल्पसंख्यकों का विशेष ख्याल रखेंगे, किंतु आज स्थिति कैसी है? भारत अपनी पंथनिरपेक्ष परंपरा के अनुसार सेक्युलर राष्ट्र है, जहां मुसलमानों को न केवल बहुसंख्यकों के बराबर अधिकार प्राप्त हैं, बल्कि वोट बैंक की राजनीति के कारण प्रायः सभी सेक्युलर दलों में उन्हें ज्यादा से ज्यादा विशेषाधिकार, रियायतें और सुविधाएं दिलाने की होड़ लगी रहती है।

वहीं पाकिस्तान में हिंदू और ईसाइयों की क्या स्थिति है? वहां उनके साथ तीसरे दर्जे के नागरिक की तरह व्यवहार होता है। पाकिस्तान के मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट के अनुसार हर महीने अकेले सिंध प्रांत में 20–25 हिंदू लड़कियों के अगवा करने, उनका जबरन मतांतरण कराने के बाद उनका मुस्लिम लड़कों से निकाह कराने की घटनाएं सामने आती हैं। पाकिस्तान से भारत आने वाले हिंदुओं की संख्या भी तेजी से बढ़ी है।

पाकिस्तान में हिंदू और ईसाइयों की क्या स्थिति है? वहां उनके साथ तीसरे दर्जे के नागरिक की तरह व्यवहार होता है। पाकिस्तान के मानवाधिकार आयोग की रिपोर्ट के अनुसार हर महीने अकेले सिंध प्रांत में 20–25 हिंदू लड़कियों के अगवा करने, उनका जबरन मतांतरण कराने के बाद उनका मुस्लिम लड़कों से निकाह कराने की घटनाएं सामने आती हैं। पाकिस्तान से भारत आने वाले हिंदुओं की संख्या भी तेजी से बढ़ी है।

हाल में रिंकल नामक एक हिंदू युवती के साथ जो हुआ वह पाकिस्तान में हिंदुओं की अवस्था को समझने के लिए काफी है। 26 मार्च को पाकिस्तान के मुख्य न्यायाधीश इफ्तिखार मोहम्मद चौधरी के समक्ष सिंध में अपने परिजनों के साथ रहने वाली 19 वर्षीय रिंकल कुमारी ने नावेद शाह नामक व्यक्ति पर अपने अपहरण का आरोप लगाते हुए उसे अपनी मां के संरक्षण में देने की गुहार लगाई। कोर्ट से जब पुलिस उसे खींचकर ले जा रही थी तो उसने बिलखते हुए मीडियाकर्मियों से कहा कि उसका जबरन मतांतरण और निकाह कराया गया है, किंतु 18 अप्रैल को मामले की सुनवाई के लिए जब वह दोबारा सर्वोच्च न्यायालय पहुंचीं तो उसने स्वेच्छा से मतांतरण और नावेद से निकाह करने की बात कबूल कर ली। कारण? सुनवाई के वक्त हजारों की संख्या में बंदूकधारियों का जमा होना।

ऐसी अनेक रिंकलों की कहानी राजस्थान, गुजरात और पंजाब में शरणागत हिंदू परिवारों के सीनों में पैबस्त हैं, लेकिन जो स्वयंभू सेक्युलर दल पाकिस्तान के हिंदुओं के उत्पीड़न पर खामोश रहते हैं।❑

बेरोजगारी

भारत में बेरोजगारी कम होने के संकेत नहीं

हमारे देश के युवाओं को रोजगार मूलक शिक्षा दी जानी चाहिए। हमारे देश के युवाओं के मन के अंदर स्वरोजगार की भावना जागृत करनी चाहिए तभी देश से बेरोजगारी दूर हो सकती है। इस विषय पर भारत सरकार को गंभीर चिंतन करने की आवश्यकता है तथा बेरोजगारी दूर करने के लिए इस विषय के विशेषज्ञों के साथ बैठकर एक गोष्ठी का आयोजन करना चाहिए तथा उससे जो परिणाम निकले उस पर अमल करना चाहिए। देश के बेरोजगारी दूर करना अपना प्रथम कर्तव्य होना चाहिए।

■ गिरीश अवस्थी

इस समय भारत की अर्थव्यवस्था में तेजी से सुधार हो रहा है किंतु भारत में रहने वाले एक अरब पच्चीस करोड़ लोगों के लिए संकट की घड़ियां आने वाली हैं।

हम सबको पता है कि इस समय विश्व में ग्लोबल आर्थिक मंदी का युग चल रहा है। भले ही इस मंदी के बावजूद कई देशों में विकास की गति में सुधार हुआ है किंतु नौकरियों की स्कीमों में कोई भी सुधार नहीं हुआ है।

अतएव अन्य राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) के अनुसार वर्ष 2008–2009 में ग्लोबल मंदी के चलते हुए करीब साढ़े पांच करोड़ लोग बेकार हो गए जो कि चिंता जनक विषय है।

अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन क अनुसार इस स्थिति में भविष्य में कोई भी सुधार होने की आशा नहीं है। ग्लोबल मंदी के चलते हुए विश्व के कई देशों ने कठोर वित्तीय नीतियां अपनायी हैं तथा श्रम बाजार में सख्ती बरती है। इसी के कारण दुनियाभर में बेरोजगारी बढ़ी है।

यह हालत विकसित देशों में कुछ ज्यादा ही है जोकि सामाजिक अस्थिरता का एक बहुत बड़ा कारण बन सकता है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार 25 करोड़ युवाओं में से 32 प्रतिशत युवाओं ने कहा कि यद्यपि भारत की विकास दर में वृद्धि हुई है लेकिन उनका जीवन सुखमय नहीं हुआ है। भारत में ही आय विषमता का दौर तेजी से बढ़ रहा है जोकि चिंताजनक है।

एक सर्वेक्षण के दौरान अंतर्राष्ट्रीय एजेन्सी गेलप ने 29 जनवरी से 8 मार्च 2012 के मध्य जो परिणाम निकाले उसमें एजेन्सी ने लोगों को तीन श्रेणियों में रखा

हम सबको पता है कि इस समय विश्व में ग्लोबल आर्थिक मंदी का युग चल रहा है। भले ही इस मंदी के बावजूद कई देशों में विकास की गति में सुधार हुआ है किंतु नौकरियों की स्कीमों में कोई भी सुधार नहीं हुआ है। अतएव अन्य राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) के अनुसार वर्ष 2008–2009 में ग्लोबल मंदी के चलते हुए करीब साढ़े पांच करोड़ लोग बेकार हो गए जो कि चिंताजनक विषय है।

है। पहले वे लोग है जो जीवन में निरंतर उन्नति कर रहे हैं, दूसरे वे लोग है जो जीवन के लिए संघर्ष कर रहे है। तीसरे वे लोग जो देश में व्याप्त आर्थिक विषमता के कारण कष्ट भोग रहे है।

एजेन्सी ने उनसे पूछा कि वे अपने को वर्तमान और भविष्य को किस श्रेणी में रख रहे हैं। रिर्पोट के अनुसार जनमत संग्रह के द्वारा ऐसे संकेत मिले है जो सबसे गरीब और बहुत कम पढ़े लिखे थे वे अपने को पीड़ित वर्ग में मानते हैं।

अध्ययन के दौरान यह भी पता चला कि भारतीय पूर्णकालिक नौकरी को अच्छी नौकरी मानते हैं। वर्ष 2012 की शुरुआत तक 42.6 प्रतिशत भारतीयों के पास पूर्णकालिक नौकरियां थी।

सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2011–2012 के बीच पीड़ितों की संख्या में वृद्धि हुई। जब सर्वेक्षण भारत के किसानों के मध्य किया गया तो उन्होंने अपने को इतना गरीब बताया कि जो देश की उच्च आर्थिक विकास दर से मेल नहीं खाता। इस सर्वेक्षण में 15 साल के ऊपर करीब 5000 किसानों ने भाग लिया। एक अनुमान के अनुसार विश्व में अगले 10 वर्षों में दुनियाभर के लगभग एक अरब 25 करोड़ युवा लोग नौकरी की तलाश में होंगे जिनमें से केवल 30 करोड़ लोगों को ही नौकरियां प्राप्त होगी।

इस विषय पर शोधकर्ता महिला लूसी का कहना है कि इस समस्या का निदान केवल यही है कि 50 साल से ज्यादा उम्र के कर्मचारी स्वतः नौकरी से त्यागपत्र दे दें। मेरी राय में लूसी का उपरोक्त विचार भारत की सामाजिक व्यवस्था को देखते हुए उचित नहीं है। क्योंकि 50 वर्ष के ऊपर के कर्मचारियों

जब सर्वेक्षण भारत के किसानों के मध्य किया गया तो उन्होंने अपने को इतना गरीब बताया कि जो देश की उच्च आर्थिक विकास दर से मेल नहीं खाता। इस सर्वेक्षण में 15 साल के ऊपर करीब 5000 किसानों ने भाग लिया। एक अनुमान के अनुसार विश्व में अगले 10 वर्षों में दुनियाभर के लगभग एक अरब 25 करोड़ युवा लोग नौकरी की तलाश में होंगे जिनमें से केवल 30 करोड़ लोगों को ही नौकरियां प्राप्त होगी।

पर सामाजिक दायित्वों का बोझ बढ़ जाता है। उन्हें अपने बच्चों की शिक्षा दिक्षा की चिंता रहती है। उसमें होने वाले खर्च के बोझ से वे दबे रहते हैं तथा अपने आश्रित लड़के एवं लड़कियों की शादी भी उन्हें करनी पड़ती है।

यदि लूसी के मतानुसार 50 वर्ष के ऊपर के लोग नौकरी से त्याग पत्र दे देंगे तो उनके सामाजिक दायित्वों का निर्वाह कैसे होगा। और वे पिछड़ों की श्रेणी में आ जाएंगे।

लूसी का देश से बेरोजगारी दूर करने का उपरोक्त तरीका भारत में कामयाब नहीं हो सकता। उचित तरीका यह है कि हमारे देश के युवाओं को रोजगार मूलक शिक्षा दी जानी चाहिए। हमारे देश के युवाओं के मन के अंदर स्वरोजगार की भावना जागृत करनी चाहिए तभी देश से बेरोजगारी दूर हो सकती है।

इस विषय पर भारत सरकार को गंभीर चिंतन करने की आवश्यकता है तथा बेरोजगारी दूर करने के लिए इस विषय के विशेषज्ञों के साथ बैठकर एक गोष्ठी का आयोजन करना चाहिए तथा उससे जो परिणाम निकले उस पर अमल करना चाहिए। देश के बेरोजगारी दूर करना अपना प्रथम कर्तव्य होना चाहिए। ❑

इतिहास और अब

राष्ट्रीय वृक्ष बरगद के अस्तित्व पर खतरा

नर्मदा का बरगद सारे विश्व में प्रसिद्ध है। यह बरगद भरूच से 22 किलोमीटर दूर नर्मदा नदी के एक टापू पर खड़ा है। इस बरगद के बारे में यहां एक जनश्रुति प्रसिद्ध है। कहते हैं कि संत कबीर एक बार दांत साफ करके दातुन को जमीन में गाड़ दिया। कुछ दिनों में वह दातुन जड़ पकड़ लिया और धीरे–धीरे विशाल रूप धारण कर लिया। इस कबीर बड़ की बकायदा पूजा होती है। अंग्रेजी काल में विदेशियों के लिए यह वृक्ष कौतुहल का विषय था।

■ उमेश प्रसाद सिंह

प्रयाग में ईसा की प्रारंभिक वर्षों में बरगद का एक विशाल वृक्ष था। चित्रकूट जाते हुए सीता जब इस वट के पास पहुंची तो उन्होंने अनेक वृक्षों से घिरे इस महावृक्ष को प्रणाम किया। वनवास से जब राम लौट रहे थे उस समय यह बरगद चमकीले लाल फलों से सुशोभित हो रहा था। उसके सौन्दर्य को देखकर श्रीराम ने सीता से कहा 'तुमने जिस बरगद की पूजा की थी वह प्रसिद्ध श्यामवट यही है।'

गोस्वामी तुलसीदास ने प्रयाग के संगम पर उगे हुए बरगद को अक्षयवट नाम दिया। उसके विशाल छत्र को उन्होंने मुनियों के मन को मोहने वाला बताया हें कोलकता के राजकीय वनस्पति वाटिका में संसार के सबसे महान वटवृक्षों में से एक बरगद खड़ा है। इसकी परिधि 270 मीटर तक फैल चुकी है। इसके बीच का असली ताना वर्षों पहले समाप्त हो गया। 1999 में आए तूफान से इस बरगद का काफी नुकसान हुआ था। मुख्य तने के बिना ही यह बरगद काफी दूर तक फैल रहा है। जगह–जगह इसकी जटाएं जमीन में गड़ी हुई हैं। प्रत्येक शाखा एक दूसरे से जुड़े होने के बावजूद स्वतंत्र आकार सिए हुए है।

आंध्र प्रदेश की राजधानी हैदराबाद से आगे विशाखापतनम रोड पर एक वटवृक्ष छह सौ मीटर की परिधि में फैला हुआ है। इसकी तीन हजार से अधिक तनें व जटाएं हैं। इसकी छाया में बीस हजार लोग पड़ाव डाल सकते हैं। पुराने जमाने में यक्ष, गंदर्भ, परियां आदि इन्हीं वृक्षों पर घर बनाकर रहती थी। संस्कृत साहित्य में बरगद को यक्षवास या यक्षतरू कहा जाता है।

नर्मदा का बरगद सारे विश्व में प्रसिद्ध है। यह बरगद भरूच से 22 किलोमीटर दूर नर्मदा नदी के एक टापू पर खड़ा है। इस बरगद के बारे में यहां एक जनश्रुति प्रसिद्ध है। कहते हैं कि संत कबीर एक बार दांत साफ करके दातुन को जमीन में गाड़ दिया। कुछ दिनों में वह दातुन जड़ पकड़ लिया और धीरे–धीरे विशाल रूप धारण कर लिया। इस कबीर बड़ की बकायदा पूजा होती है। अंग्रेजी काल में विदेशियों के लिए यह वृक्ष कौतुहल का विषय था।

सन 1825 में हेबर नामक पादरी ने इस बरगद को संसार का सबसे बड़ा वृक्ष बताया था। 1834 में फोर्ब्स ने अपनी भारत यात्रा में लिखा कि इस असाधारण वृक्ष के बड़े भाग को नदी में प्रतिवर्ष आने वाली बाढ़ ने क्षति पहुंचाई है फिर भी जो कुछ बचा है वह परिधि में छह सौ मीटर के आसपास है।

महान सम्राट अशोक का सबसे प्रिय वृक्ष बरगद था। उसने बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए अपनी बेटी संघमित्रा को श्रीलंका भेजा तो श्रीलंकावासियों के लिए उपहार

के रूप में एक छोटा सा बरगद का कलम भी भेजा।

करीब 23 सौ वर्ष पूर्व सम्राट अशोक ने देश के प्रमुख सड़क मार्गों पर बड़े पैमाने पर बरगद के पेड़ों का रोपण कराया था। वे सभी पड़े अवविलुप्त होने के कगार पर हैं। मानूसन बारिश में आई कमी को इसीके नतीजे के रूप में आंका जा रहा है।

पूर्वांचल में हुए एक सर्वे से मिले आंकड़े चौंकाने वाले हैं। बरगद के अलावा पंचवटी वृक्ष श्रेणी के पीपल, पफड़ी, आम और जामुन पर संकट मंडरा रहा है। वर्ष 2000–01 में चंदौली जिले में राष्ट्रीय राजमार्ग के चौड़ीकरण के लिए बाधक बने करीब पांच हजार से अधिक पेड़ काट डाले गए थे। इनमें 70 प्रतिशत वृक्ष पंचवटी श्रेणी के थे। इसके अलावा एक चौथाई बरगद के पेड़ भी शामिल थे।

सरकार ने कटे पेड़ों के एवज में चौड़ी की गई सड़क के दोनों किनारे 10 फुट की दूरी के दायरे में पौधे रोपने की योजना तो बनाई लेकिन वह अमल में नहीं लाई जा सकी। चौड़ीकरण से बचे सैयदराजा बाजार की दो किलोमीटर की सड़क पर अब भी 24 बरगद के पेड़ खड़े है।

1990 की गणना के अनुसार पूर्वांचल के नौबतपुर से इलाहाबाद तक करीब 180 किलोमीटर की सड़क के दोनों ओर कुल 3001 पेड़ थे। इनमें वटवृक्षों की संख्या 785 थी। विगत वर्षों में देशभर में विकास और निर्माण के लिए भारी संख्या में पेड़ काटे गए।

भारत का बरगद जो विश्वभर में प्रसिद्ध था। यहां के सभी गांवों में बरगद और पीपल के पेड़ अवश्य होते थे। गांवों में इन्हीं पेड़ों की छाया में चौपाल लगता था। जाड़े के दिनों में वटवृक्षों के नीचे फूस का घेरा डालकर गांव के लोग रात्रि में सोते थे। वृक्ष की छाया उन्हें गर्मी प्रदान करता था। जेठ की दुपहरी में पेड़ के नीचे ठंडापन मिलता था। नए बरगद के पेड़ लगाने पर भी विशाल रूप नहीं ले पाते। अब जो पुराने बरगद के पेड़ हैं उनमें पचानवे प्रतिशत बूढ़े हो चुके हैं। केन्द्र और राज्य सरकारों को बरगद का वृक्ष लगाने की प्राथमिकता देनी चाहिए। यह देश के पर्यावरण के साथ–साथ सभी भारतीयों के लिए उपयोगी है। ❑

सदस्यता संबंधी सूचना

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीध्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि ''स्वदेशी पत्रिका'' के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है।

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	100/–	1000/–
अंग्रेजी	100/–	1000/–

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

पता : **स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22**

भारत में विदेशी निवेश से बेरोजगारी बढ़ेगी

यदि एफडीआई के बाद वालमार्ट हमारे देश में आया तो इसका सबसे बड़ा नुकसान यह होगा कि देश की 1 करोड़ 20 लाख दुकानें खत्म हो जाएंगी, साथ ही खत्म होंगे 8 करोड़ रोजगार। – दीपक शर्मा 'प्रदीप'

स्वदेशी जागरण मंच जमशेदपुर द्वारा 12वां जिला सम्मेलन 27 मई 2012 को चैंबर भवन में आयोजित किया गया।

जिला सम्मेलन में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और राष्ट्रीय जल नीति के खिलाफ मंच ने जोरदार आवाज उठाई।

मंच के उत्तर भारत के क्षेत्रीय सहसंयोजक दीपक शर्मा 'प्रदीप' ने कहा कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) को देश में मंजूरी मिली तो 8 करोड़ लोग बेरोजगार हो जाएंगे। हमारे छोटे उद्योग पूरी तरह चौपट हो जाएंगे और इसके असर के बारे में बर्बादी शब्द छोटा पड़ जाएगा।

उन्होंने कहा मंच व देशवासियों के प्रचंड विरोध के कारण फिलहाल केन्द्र ने एफडीआई को दी गई मंजूरी वापस ले ली है परंतु इस बारे में देशवासियों को हमेशा सतर्क रहना चाहिए ताकि वह फिर इसे लागू करने में सफल नहीं हो पाए।

यदि एफडीआई के बाद वालमार्ट हमारे देश में आया तो इसका सबसे बड़ा नुकसान यह होगा कि देश की 1 करोड़ 20 लाख दुकानें खत्म हो जाएंगी। साथ ही खत्म होंगे 8 करोड़ रोजगार। उन्होंने कहा कि आज देश में खुदरा बाजार में करीब साढ़े तीन करोड़ लोग या तो मालिक या फिर कर्मचारी हैं। इसके अलावा माल लाने या ले जाने के लिए काम में करीब डेढ़ करोड़ लोग लगे हैं। साथ ही जिन कारखानों, फैक्ट्रियों और वर्कशाप के सामान इन दुकानों में बिकते हैं, वहां भी लगभग 3 करोड़ लोग काम कर रहे हैं। यानी पूरे खुदरा कारोबार में लगभग 8 करोड़ लोग

रोजगार पा रहे हैं। साथ ही उन्होंने कहा कि बीते वित्तीय वर्ष 2010 में देश का खुदरा व्यापार 20 लाख करोड़ रुपए का था।

एफडीआई के बाद जिस अमरीकी कंपनी वालमार्ट के आने की संभावना है उसने भी इसी अवधि में दुनियाभर के 28 देशों में 9,884 दुकानों के माध्यम से 20 लाख करोड़ का कारोबार किया परंतु उसकी दुकानों में सिर्फ 21 लाख लोगों को नौकरीनुमा रोजगार मिला। यही अंतर है देशी खुदरा बाजार व वालमार्ट में। उन्होंने कहा कि आज अमरीका अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए भारत पर लगातार डोरे डाल रहा है ताकि 120 करोड़ लोगों का देश उनके माल का बाजार बन सके। दूसरी ओर, विश्व व्यापार संगठन का सदस्य बनकर भारत सरकार उसके दबाव में झुकती जा रही है जो अर्थव्यवस्था के लिए नुकसानदेह है।

मुख्य अतिथि व आदित्यपुर स्माल स्केल इंडस्ट्रीज के अध्यक्ष आर.के. सिन्हा ने कहा कि अमरीका और यूरोप हमारे बाजार पर कब्जा जमाकर 120 करोड़ जनता को लूटने का प्रयास में है। हमें इससे सचेत रहने की जरूरत है। उन्होंने विदेशी निवेश के पीछे सरकार की उस सोच को मुख्य कारण करार दिया जिसमें उसे बड़ी कंपनियों से आसानी से 14 प्रतिशत वैट मिल जाएगा। राष्ट्रीय जल नीति पर मुख्य वक्ता मनोज सिंह ने कहा कि 65 वर्ष बीत जाने के बाद भी 80 प्रतिशत लोगों को शुद्ध पानी नहीं मिल पा रहा है।

सम्मेलन में अरविंद सिंह (सीबीएमडी), निखिल राय, अखिलेश ठाकुर, लक्ष्मण राय, अभय सिंह, राजपति देवी, पंकज सिंह, जेकेएम राजू, वीएन सिंह, सतीश शर्मा, अमित कुमार, सुरेन्द्र प्रसाद, शांति देवी, किशोर शर्मा, मंजू ठाकुर, शालीग्राम मिस्त्री, राजकुमार साव, गौरव शंकर, गुरजीत सिंह, संजीत प्रमाणिक, सूजय कुमार, देव कुमार, बाबला सिंह, अनिल तिवारी, अरविंद तिवारी, मिथिलेश प्रसाद, मो अमन, डा. पूनम सहाय, दीपक यादव, प्रशांत सिंह, घनश्याम दास, मुकेश कुमार और नवनीत कुमार आदि सहित अनेक कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।❑

रोजमर्रा कार्यों में स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करें

आज देश की परिस्थितियां ऐसी बन गई है कि विदेशी निवेश को बढ़ावा दिया जा रहा है। इससे हमारे देश में बनने वाली वस्तुओं की मांग कम हो रही है और कारीगर बेकार हो रहे है। अतः आज देश में स्वदेशी वस्तुओं को अपनाकर ही इस समस्या से निजात दिलाई जा सकती है। – श्रीमती लीला टंडन

स्वदेशी जागरण मंच हिमाचल प्रदेश का महिला प्रांत सम्मेलन भूतनाथ मंदिर सराय में 14–15 अप्रैल 2012 को सम्पन्न हुआ।

यह प्रांत सम्मेलन अखिल भारतीय योजना के अनुपालन में आयोजित किया गया। सम्मेलन में दूर–दूर से 300 के करीब महिलाओं ने भाग लिया।

उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता हिमाचल महिला आयोग की प्रथम अध्यक्षा एवं सुप्रसिद्ध समाज सेविका श्रीमती लीला टण्डन ने की।

मुख्य वक्ता और मुख्यातिथि के नाते श्रीमती रेणु पुराणिक अखिल भारतीय महिला प्रमुख उपस्थित रहीं।

श्रीमती दिनेश गुलेरिया प्रांत महिला प्रमुख ने अतिथियों का परिचय करवाया और महिला सम्मेलन आयोजित करने की भूमिका के बारे में अपने विचार प्रकट किए।

श्रीमती रेणु पुराणिक ने कहा कि आज हमारा देश दोराहे पर खड़ा है। बीज नीतियां, विदेशीकरण और दुकानदारी में विदेशी निवेश को बढ़ावा देकर वर्तमान सरकार कई परिवारों को बेरोजगार बनाने पर तुली हुई है। उन्होंने महिलाओं को स्वदेशी अपनाने का आह्वान किया।

अध्यक्ष के नाते अपने विचार प्रगट करते हुए स्वदेशी जागरण मंच महिला सम्मेलन की उपयोगिता पर बोलते हुए श्रीमती लीला टण्डन जी ने आज देश की परिस्थिति पर अपनी पीड़ा व्यक्त की और विदेशी कंपनियों के उत्पाद न खरीदने का आह्वान किया तथा मीडिया में अश्लील सामग्री परोसने को बन्द करने का आह्वान किया।

स्वदेशी जागरण मंच के राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य श्री पुढकर पुराणिक, श्रीमती सरिता हांडा, बाबाराम देव संस्था की राजय कार्यकारिणी सदस्य आशा ठाकुर तथा प्रांत प्रमुख बिमला ठाकुर ने की, और अपने विचार प्रकट किए।

श्रीमती कुलविन्द्रा ने एक सत्र की अध्यक्षता की।

कार्यक्रम में मुख्य अतिथि श्रीमती सरवीण चौधरी, मंत्री हिमालच प्रदेश सरकार ने अपने उद्बोधन में कहा कि हम महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण विधान सभा में भी देने की मांग करेंगे।

उन्होंने कहा कि हमें अपने रोजमर्रा के कार्यों में स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करना चाहिए।

उन्होंने कहा कि महिलाएं घर की प्रमुखता से देखती है और उनका व्यवहार ही बच्चों के लिए संस्कार का काम करता है। हम अपने परिवार में बच्चों को स्वदेशी की जानकारी दें जैसे माता, माँ कहे। मौम, डैड का प्रयोग न करें। क्योंकि मौम का अर्थ है मरना और डैड का अर्थ भी मरना है। जबकि माता शब्द जननी है जैसे भारत माता को हम अपनी मातृभूमि यानि माँ कहते हैं। यह संस्कृति हमारे देश हिन्दोस्तान में ही है बाकी ऐसा किसी भी देश में नहीं है।

हमारा देश बहुत खूबसूरत देश है जिसमें सभी ऋतुओं का आनन्द है। पहाड़, कलकलाती नदियां, बर्फ, वन्य वनस्पति, जड़ी–बूटियां हमारे देश में ही पाई जाती है। इसलिए विदेशीयों की नजर हमारे देश पर और हमारी संस्कृति पर है। हमें संकल्प करना है कि हम अपने देश को विदेशी निवेश, विदेशी संस्कृति से बचाएंगे। ❑